मैंने देखे हुए

परम पूजनीय श्री बालासाहब देवरस

लेखक

मु. कृष्ण चौथाईवाले

स्मृति भवन के पास, केशवनगर

नागपुर– 440009

प्रकाशक

पु. मो. सोनटके

भारतीय विचार साधना

डॉ. हेडगेवार भवन,महल

नगपुर– 440002

मुद्रक

दि. भि. धाक्रस

नाग मुद्राणालय, रूईकर मार्ग

नागपुर – 440002

मूल्य – ४/–

मैंने देखे हुए

परम पूजनीय श्री बालासाहब देवरस

1943 के मई माह के पुणे के संघशिक्षा वर्ग का एक संस्मरणीय प्रसंग। प. पू. श्री गुरुजी संघ के एक अधिकारी का परिचय कराने खड़े हुए। "आप में से अनेक स्वयंसेवकों ने डा. हेडगेवार जी को देखा नहीं होगा। श्री बालासाहब देवरस को देखो तो आपको डा. हेडगेवार दिखेंगे।" ये वाक्य सुनकर उपस्थित अधिकारी और शिक्षार्थी स्वयंसेवक अवाक् रह गये।

1944–45 की घटना होगी। रेशिमबाग में संघ का उत्सव था। पू. श्री गुरुजी, स्व. श्री कृष्णराव मोहरील, पू. श्री गुरुजी के भांजे आदि तांगे में रेशिमबाग की ओर जा रहे थे। राह में मुझे देखा तो तांगे में बिठा लिया। कुछ अंतर बाद श्री बालासाहब अपने समवयस्क मित्रों के साथ पैदल ही रेशिमबाग जाते हुए दिखे। सभी हंसी मजाक करते हुए चले जा रहे थे। उनको देखकर श्री गुरुजी ने कहा, "सच्चे सरसंघचालक पैदल जा रहे हैं, और नकली तांगे में"

1947 कि दिसम्बर माह में नागपुर के पास पारडी नामक स्थान पर नागपुर तथा विदर्भ के लगभग दस हजार स्वयंसेवकों का शिविर चल रहा था। इस शिविर की सम्पूर्ण व्यवस्था श्री बालासाहब के हाथों में थी। स्वयंसेवकों के लिये बौद्धिक वर्ग की योजना थी। नियोजित समय पर बौद्धिक वर्ग के लिये बालासाहब निकले तब आटे से सने हुए हाथ धोकर पोंछते हुए ही। श्री गुरुजी ने उनका परिचय कराते हुए कहा, "जिन के कारण मुझे सरसंघचालक नाम से पहचाना जाता है, ऐसे ये बालासाहब देवरस।" पू. श्री बालासाहब के 21 वर्षों के सरसंघचालकत्व के प्रदीर्घ काल खण्ड में, जिन्होंने डाक्टर जी को देखा नहीं था ऐसे हजारों स्वयंसेवकों को तथा हितैसियों को श्री गुरुजी के उपरोक्त उद्‌गार का प्रत्यय आता रहा।

देवरस परिवार विशेष धनी परिवार न होते हुए भी एक सुखी परिवार था। इतवारी में उनका बाड़ा था। गोंदिया के पास खेतीबाड़ी थी। श्री बालासाहब के पिता श्री दत्तात्रय उपाख्य भैयाजी देवरस रेवेन्यू विभाग में अधिकारी थे तथा नागपुर के तत्कालीन प्रसिद्ध साक्षात्कारी पुरुष श्री मोतीबाबा जामदार के शिष्य थे। गुरु घराने की परम्परानुसार देवरस परिवार में श्री दत्तात्रय की उपासना चलती थी। इसीलिये श्री बालासाहब तथा भाऊराव के उपनयन 'संस्कार' गणगापुर में हुए थे। श्री बालासाहब की मां सर्वार्थ से माऊली (माता) थीं। सब कुटुंबीय उनको 'कुलदेवता' मानते थे। 5 पुत्र और 4 कन्या ऐसा बड़ा परिवार तथा घर पर आने जानेवाले सुहृद और खेतों पर काम करनेवाले कर्मचारी आदि सब लोगों की जिम्मेदारी वे सफलता से सम्भालती थीं। पेट के दर्द के कारण लगभग 50 वर्ष वे कोको पीकर ही रहीं। घर के सब काम, कुल परम्परागत उत्सव आगत स्वागत का सब काम वे अकेली ही संभालती। बालासाहब के ज्येष्ठ भ्राता श्री अण्णासाहब वकील हुए तथा मध्यप्रदेश के बालाघाट में उन्होंने व्यवसाय शुरू किया। दूसरे बन्धु

श्री भास्करराव उपाख्य नानासाहब पुलिस विभाग में कार्यरत हुए। तीसरे श्री बाबूराव डाक्टरी व्यवसाय के लिये बालाघाट में स्थाइक हुए। तीनों ने अपने क्षेत्र में प्रगति करते हुए प्रतिष्ठा और सम्पन्नता प्राप्त की।

माता द्वारा पृष्ठपोषण

बालासाहब तथा भाऊराव कुशाग्र बुद्धि के थे। परीक्षा में सदैव प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होते रहे। पदवी परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होनेवाले विद्यार्थी डाक्टर, वकील होने के सपने देखते थे। सम्पन्न परिवारों के कुशाग्र बुद्धि के छात्र विदेश में जाकर आय. सी. एस्. होने के सपने देखते थे। बालासाहब भी उसी रास्ते से जायेंगे, ऐसी कुटुंबियों की आकांक्षा रहना स्वाभाविक ही था। किन्तु उन्होंने वह रास्ता छोड़कर अन्य अनोखा रास्ता पकड़ा। बालासाहब से अपेक्षित आकांक्षा पूर्ण न होने से पिता–भैयाजी का उन पर रोष अवश्य था किन्तु उसके नीचे उतकट स्नेह के मधुर सुगंध को भी अनेक निकटस्थ लोगों को मिलता था। बड़े तीनों भाई नागपुर के बाहर, श्री भाऊराव उत्तर प्रदेश में होने के कारण बालासाहब ही माता जी के पास थे।

माताजी, भैयाजी की नाराजगी सहन करते हुए भी बालासाहब को सम्हाला करती थीं। श्री बालासाहब ने जीवन का कण्टकाकीर्ण मार्ग स्वीकारने के बाद भी वे उनके पीछे खड़ी रही। बालासाहब की स्वयं बताई हुई एक स्मृति मां के बड़प्पन का परिचय देती है। बालासाहब नागपुर के कार्यवाह बनने के बाद स्वयंसेवकों का उनके घर जाना आना बढ़ता गया। पिताजी – श्री भैयाजी और माताजी भी पुरानी कर्मठ प्रवृत्ति के थे। वे स्वयंसेवकों पर भी समान रूप से स्नेह भाव रखते थे। बाहरगांव से आये स्वयंसेवक कई बार घर पे भोजन करते थे। बालासाहब ने माता जी को पहले ही बता दिया था की आनेवाले स्वयंसेवक किसी भी जाति के हों, मेरे साथ भोजन करेंगे, और भोजन के पश्चात् वे अपनी थालियां नहीं उठायेंगे। मेरी थाली के साथ ही तुम्हे ही या घर के अन्य लोगों को उनकी थालियां उठानी चाहिये। यह मान्य हो तो मैं अपने मित्रों को भोजन पर बुलाउँगा। बालासाहब का यह कहना उनकी माता जी ने प्रसन्नता से तथा निःसंकोच स्वीकार कर लिया था। Charity begons at home इस कहावत के अनुसार सामाजिक समता तथा समरसता का पाठ देवरस में 50 वर्ष पूर्व ही प्रारम्भ हो चुका था। इसीलिये बालासाहब के मन में माताजी के विषय में अतीव आदर, श्रद्धा तथा आत्मीयता थी।

क्रान्तिकारियों का आकर्षण

उस समय की देशस्थिति भी विपरीत ही थी। सर्व सामान्य बहुसंख्य समाज विदेशी शासन के सर्वंकष तथा हृदय शून्य व्यवहार के दबाव में पीसा जा रहा था, फिर भी समाज में कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखाई देती थी। तिलक जी के कहने के अनुसार समाज बर्फ के ढेले जैसे बना हुआ था। फिर भी कुछ युवकों के मनों में विदेशी शासन के खिलाफ असंतोष की अग्नि धधक रही थी। क्रांतिकार्य का युवक मनों पर जबरदस्त आकर्षण था। स्वातंत्र्यवीर सावरकर रत्नागिरी में स्थानबद्ध थे, फिर भी उनके प्रज्वलित अंगारो

जैसे जीवन का युवकों पर अमिट प्रभाव था। शासनद्वारा प्रतिबंधित उनके ग्रंथों का सामूहिक वाचन होता था। सावरकरजी ने मैझिनी के चरित्रग्रंथ को लिखी प्रस्तावना अनेक स्वयंसेवकों को मुखोद्‌गत थी। गोमंतक, स्वातंत्रता सूत्र, "सागरा प्राण तळमळला" यह काव्य तथा माझे मृत्युपत्र आदि काव्य युवकों कण्ठस्थ थे।

क्रान्तिकार्य का आकर्षण होने के कारण संघ की शाखा पद्धति दक्ष, आरम् आदि नीरस लगना स्वाभाविक था। विशेषतः दैनंदिन शाखा की पद्धति से हिन्दू राष्ट्र को स्वतंत्र करने का सपना कैसे पूरा होगा इस शंका से अनेक युवकों को त्रस्त कर रखा था। "हम लोग डाक्टर जी से वादविवाद कर संदेह प्रकट करते थे" ऐसा स्वयं बालासाहब ने ही कहा था। परंतु डाक्टरजी ने अपनी वैशिष्ट्यपूर्ण पद्धति से और नम्र भाषा में किन्तु दृढ़तापूर्वक देश की स्थिति का वास्तवपूर्ण चित्रण कर तत्कालीन दुरावस्था का मूल कारण तथा वह अवस्था दूर करने का दिर्घकालीन दिखनेवाला किन्तु निश्चित फलदायी मार्ग इस संदर्भ में चर्चा कर शंकाओं का समाधान किया। शाखा पद्धति से तैयार युवकों के जीवनों को आकार दिया, ध्येय का दर्शन कराया तथा मार्गदर्शन भी किया। कुश पथक के सभी युवा कार्यकर्ताओं ने अपने जीवन की दिशा निश्चित की। यह दिशानिर्देश पू. डाक्टर के प्रदीर्घ स्पेहपूर्ण संपर्क, उनके तपः पूत कर्मशील राष्ट्र समर्पित, समाजसेवा पूर्ण जीवन आदि में से हुआ। वह पूर्णतः डाक्टर जी की निर्मित (Creation) थी। यह निर्मिती लचीली होते हुए भी अभेद्य थी। कार्यकर्ताओं पर हुए संस्कार 'स्थायी थे। इस विषय में एक किस्सा बालासाहब ने स्वयं ही बताया था।

1935–36 तक लगभग सब सायं शाखाएं ही हुआ करती थी। रविवार को प्रातः एकत्रीकरण – समता (Parade) होती थी। सायंकाल को शाखा नहीं होती थी। रोज की आदत के कारण तरुण स्वयंसेवक डाक्टरजी के साथ एकत्रित बैठते थे। एक रविवार को इस अनौपचारिक बैठक के बाद, डाक्टरजी ने लिखे हुए पत्र घर जाते समय डाक पेटी में डालने के लिये बालासाहब को दिये। इतवारी में घर लौटते समय बालासाहब विचारों में मग्न थे। रास्ते में डाक पेटी दिखी। उस में पत्र डालना आरम्भ करते समय उन को उस पेटी का फीका लाल रंग देखकर ध्वज का आभास हुआ। शरीर और मन के अभ्यास के कारण उन्होंने प्रमाण किया और पत्र डाले। ध्यान में आने पर यह कृति किसी ने कही देखी नहीं यह विचार आते ही उन्होंने चारों ओर देखा। किन्तु कोई नहीं था। उन्हें अपनी कृति पर हंसी भी आयी और वे घर गये।

अमिट संस्कारों का और एक उदाहरण। संघ के प्रारंभ से श्री बालाजी हुद्दार स्वयंसेवक थे। अत्यंत बुद्धिमान, अभ्यासू, अनेक विषयों का ज्ञान रखनेवाले चिंतक तथा अच्छे वक्ता थे। पू. डाक्टरजी का उनपर बहुत स्नेह था। वे श्री बालासाहब से उम्र में बड़े थे। वे संघ के प्रथम सहकार्यवाह! किन्तु क्रान्तिकार्य के अनिवार आकर्षण के कारण उन्होंने अपने कुछ सहयोगियों के साथ मध्यप्रदेश के बालाघाट नगर में राजकीय डाका डाला। सब पकड़े गये। सरसंघचालक के बाद सरकार्यवाह पर पर आसीन व्यक्ति इस अपराध में

उलझने के कारण बहुत अड़चनों का सामना करना पड़ा। कारावास से मुक्त होने पर हुद्दार जी पत्रकारिता की शिक्षा के लिये इंगलैण्ड गये वहां से स्पेन में गृह युद्ध में भाग लिया। इस कालखण्ड में उन पर साम्यवाद का प्रभाव हुआ। 1939 में भारत में लौटने के बाद पू. डाक्टर जी ने उनका प्रकट स्वागत किया। शिविर में उनके युद्धानुभवों के कथन के कार्यक्रम हुए। किन्तु भाषणों में वर्ग कलह आदि साम्यवादी भाषा सुनकर उनका अब संघकार्य में कोई उपयोग नहीं रहा, यह सभी के ध्यान में आया। हुद्दार जी ने कुशपथक के तरुणों से चर्चा करने की डाक्टर जी से अनुमति मांगी। डाक्टर जी से अनुमति प्राप्त कर उम्र, अनुभव आदि दृष्टि से कम रहनेवाले तरुणों से उन्होंने चर्चा की। किन्तु अपनी सब कुशलता का प्रयोग करने के बावजूद वे किसी को भी अपनी ओर आकृष्ट कर नहीं सके। उनकी वाक्पटुता का किसी पर तनिक भी परिणाम नहीं हुआ।

पू. डाक्टरजी ने अविचल ध्येयशक्ति, संघकार्य के लिये आवश्यक गुणों से युक्त शरीर, मन, बुद्धि एवं भावना को उद्दिष्टोन्मुख मोड़ देनेवाले, समर्पित वृत्ति के स्वयंसेवकों का गुट, अत्यंत परिश्रम से, अखंड सावधानी रखते हुए, निर्माण किया था। इस गुट के कार्यकर्ता नगर के अनेक विभागों में गये थे। शाखाएं प्रारंभ की गई। श्री बालासाहब इतवारी भाग मे कार्य करने लगे। आज भी नगर के फैली हुई जनता का पांचवा हिस्सा इतवारी में ही रहता है। उन दिनों तो आधी बस्ती वहां रहती थी। पढ़े लिखे लोगों का प्रमाण अत्यल्प था। छोटा–बड़ा व्यवसाय करनेवालों की संख्या अधिक थी। व्यापार का यह केन्द्र था। इस कारण धनी व्यापारी, इसी क्षेत्र में रहते थे। बस्ती पुरानी। नागरी सुविधाएं अपवाद में ही थी। प्रारंभ में इतवारी शाखाा महाल से जुड़ी इतवारी मुहल्ले में आती थी। एक ही शाखा होने से, इतवारी के दूर–दूर के स्वयंसेवक पैदल इतवारी शाखा में आया करते थे। यह क्षेत्र कांग्रेस की गढ़ थी। (आज भी विशेष अंतर नहीं पड़ा है।) ऐसे पथरीले क्षेत्र में, बालासाहब ने संघकार्य के बीज बोये। वह अंकुरित हुए। बढ़े। विस्तारित हुए। बालासाहब ने समर्पित कार्यकर्ताओं का एक गुट यहां तैयार किया। उस काल में बाहरी प्रदेशों में प्रांत प्रचारक के रूप में या संघ शिक्षावर्ग के लिये शिक्षक के रूप में भेजे गये स्वयंसेवकों में, इतवारी के स्वयंसवकों का प्रमाण अधिक था। श्री भाऊराव देवरस, पं. बच्छराजजी व्यास, श्री पांडुरंगपंत क्षीरसागर, श्री भैय्याजी शहादाणी, श्री कालीदास सालोडकर इत्यादि कर्तृत्ववान एवं ज्येष्ट प्रचारक, इतवारी शाखा ने ही तैयार किये। 1932 में पुणे में संघ शिक्षा वर्ग प्रारंभ हुआ। 1937 में श्री बालासाहब स्वयं, पुणे के वर्ग में मुख्यशिक्षक के रूप में गये 1941–48 तक पुणे के वर्ग में शिक्षक के रूप में, 4 स्वयंसेवक भेजे जाते थे। जिनमें तीन, इतवारी के रहा करते थे। पू. श्री बालासाहब के प्रेरणा एवं मार्गदर्शन प्राप्त, शिक्षित 100–125 स्वयंसेवकों का यह गुट था। यहीं से स्वयंसेवक इतवारी एवं महाल आदि भागों में जाने लगे। अल्पावधी में ही शहर में, शाखा का जाल बिछ गया। पू. डॉक्टर जी का अतुलनीय संघटनकौशल श्री बालासाहब में पूर्णरूपेण संक्रमित हुवा था। यह कहना अत्युक्ति नहीं होगी।

बालासाहब में नेतृत्व का गुण जन्मजात ही था। कुशपाथक के स्वयंसेवक उनका अनुसरण करते थे यह बात उस पथक के एक कार्यकर्ता ने ही कही थी। साधारण मनुष्य अनुकरण से ही अपने जीवन का मार्ग तैयार करता है। भाषण, चर्चा, ग्रंथाध्ययन, उपदेश आदि से भी सामने दिखनेवाले आदर्श जीवन के अनुसार वह अपने जीवन को दिशा देता है। बालासाहब ने ऐसा ही जीवनादर्श खड़ा किया। पू. डाक्टर जी को स्वयंसेवक में अपेक्षित गुणवत्ता प्रथम अपने व्यक्तित्व में प्राप्त की, बढ़ायी और परिपुष्ट बनायी। शाखापद्धति के प्रयोग से उनके जीवन को आकार मिला। बालासाहब ने कार्यपद्धति के सूक्ष्तम अंग आत्मसात् किये। वर्ग शिक्षक, मुख्य शिक्षक, कार्यवाह, प्रचारक इन सभी भूमिकाओं में उन्होंने संघकार्य किया है।

स्वयंसेवक की निर्मिति में प्रमुख का सब स्वयंसेवकों से निरपेक्ष आत्मीयता से ओतप्रोत संपर्क; महत्व का होता है। स्वयंसेवकों को अपने शाखा प्रमुख या गणशिक्षक के विषय में आप्तजनों से अधिक आत्मीयता के कारण, प्रमुख का अनुसरण करने में उसको संकोच नहीं लगता। मैं नागपुर के पास कलमेश्वर (जो आजकल तहसील का स्थान है।) गांव से 8वीं की परीक्षा उत्तीर्ण कर नागपुर आया था। आठवीं में पढ़ते समय 1934 में प. पू. डाक्टर जी, सर्वश्री दादा परमार्थ, कृष्णराव मोहरीर और तालुका संघचालक जब कमलेश्वर आये थे तब डाक्टर जी की उपस्थिति में मैंने प्रतिज्ञा ली थी। 1935 में हायस्कूल की शिक्षा के लिये नागपुर आया। इतवारी में रहता था इसलिये इतवारी शाखा में जाने लगा। पू. श्री बालासाहब का उस समय से मेरा संबंध आया। उनके मार्गदर्शन में जीवन बनाने का अभ्यास हुआ।

उस समय इतवारी शाखा, एक टूटे हुए मकान के प्रशस्त आंगन में होती थी। घर में कोई न रहने के कारण अगल–बगल में रहने वाले लोग उसका शैचालय जैसा उपयोग करते थे। सायं शाखा के प्रारंभ के 20–25 मिनिटपूर्व हम लोगों के लिये एकत्रित होकर आंगन की सफाई, उस पर पानी छिड़कना आदि कार्य प्रतिदिन करना अनिवार्य था। इन सभी कामों में श्री बालासाहब हमारे साथ सहभागी होकर सब काम योग्य पद्धति से करवाते थे। वे हम लोगों से आयु से बड़े तथा अधिक पढ़े लिखे होने के बावजूद हमारे साथ खेलते रहें हम लोग उनको 'बाला' इस नाम से ही संबोधित करते थे। शाखा के सभी कार्यक्रमों में हमारी प्रगति हो इस बातपर उनका ध्यान रहता था। बालकों के शिविर में वहिनीशः समता स्पर्धाएं होती नहीं थी। अपितु प्रत्येक वाहिनी (company) में से एक गण (Ploatoon) 'पटु' (efficent) हिसाब से तैयार किया जाता था। इन गणों में समता स्पर्धा होती थी। उस समय बालकों का पदवेश काले जूते और घुटने तक के मोजे ऐसा रहता था और तरुण स्वयंसेवक लांगबूट, पटीज और पुंगतियों का उपयोग करते थे। उस समय शहर तथा धंतोली–धरमपेठ विभाग में शाखाएं थी। धंतोली–धरमपेठ विभाग के बहुतेरे पालक शिक्षित और आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न थे। अतः इस उत्कृष्ट गणों के बाल स्वयंसेवक भी तरुण का पदवेश अपनाते थे। कड़क इस्त्री की पैण्ट, चमकनेवाला पट्टा, बिल्ले और पदवेश के कारण धंतोली–धरमपेठ के गण आकर्षण लगते। समता की स्पर्धा में भी धंतोली–धरमपेठ के गण बाजी मार जाते थे। 1936 में बालासाहब ने

हम लोगों को बताया कि इसवर्ष पदवेश में कोई परिवर्तन न करते हुए भी प्रथम क्रमांक प्राप्त करना है। उनके कहने के अनुसार हम सब तैयारी करने लगे। शाखा समाप्त होने के बाद वे गण के समता का अभ्यास कराते रहे। अभ्यास कराते समय प्रचलन में लेफ्ट राईट आदेश के अनुसार किसी की गलती हुई तो वे हाथ का छोटा सा डण्डा पैर पर मारते, किन्तु कोई भी नाराज नहीं हुआ। स्मार्ट गणों को अनाकर्षण गण ने मात दी। लगन और सातत्य और योजनापूर्वक आत्मविश्वास से परिश्रम करने से कठिन से कठिन काम में भी यश मिलता है यह पाठ हम लोग सीखे।

नागपुर के कार्यवाह

1937 में बालासाहब की नागपुर कार्यवाह पद पर नियुक्ति हुई संयोग से पू. श्री गुरुजी 1937 के मार्च माह से सारगाछी से लौटे थे। वे भी संघकार्य में संपूर्ण शक्ति से सहभागी हुए। एक स्वयंसेवक के नाते होनेवाले निर्मिती की प्रक्रिया में कई कदम बढ़ाये थे और दूसरे का प्रवास केवल प्रारम्भ हुआ था।

नागपुर कार्यवाह के नाते बालासाहब का कार्यक्षेत्र बढ़ा। पूरे शहर के स्वयंसेक उनके मार्गदर्शन की कक्षा में आये। किन्तु इतवारी शाखा में उनकी निर्मिती प्रक्रिया में प्रयास करनेवाले स्वयंसेवकों पर उनका पहले जैसा ही ध्यान रहता था। अपना कार्यकर्ता सर्वांगों में विकसित, विविध गुणों से सम्पन्न, स्वावलम्बी तथा उपक्रमशील हो इस बात पर वे बारीकी से ध्यान रखते थे। संघ के उत्सव, शिविर, वनभोजन के कार्यक्रम आदि का आयोजन बहुत कष्टकर था। उन दिनों अर्थाभाव के कारण विविध कार्यक्रमों की व्यवस्था के लिये बहुत मेहनत करनी पड़ती थी। पैसा देकर सिद्धता करना संभव ही नहीं था। सभी कार्य स्वयंसेवकों को ही करने पड़ते थे। उदाहरण के लिये – शिविर खड़ा करने के लिये आवश्यक साहित्य जुटाना, तंबू तथा टाटकी झोपड़ियां बांधना, संडासों का निर्माण, नालियां खोदना आदि सब काम करने पड़ते स्वयंसेवकों को। बालासाहब ने ये सब काम करने की पद्धति सिखायी। वे स्वयं कर दिखाते और स्वयंसेवक सीखते थे। 2–4 वर्षें में ये सारे काम तेज गति से और उत्कृष्ट पद्धति से करनेवाले स्वयंसेवकों के गुट हरेक शाखा में खड़े हुए।

स्वयंसेवक–निर्मिती में 'उद्धरेत् आत्मनात्मानम्' इस बातपर उनका ध्यान रहता था। प्रत्यक्ष शाखा कार्य में वे स्वयं हर बात की शिक्षा नहीं देते हुए दायित्व सौंप कर वह पूर्ण करने की दृष्टि से विचार करने को कहते। मेरे ही संबंध के दो उदाहरणों से यह स्पष्ट होगा।

इतवारी शाखा के हमारे गण के 15 स्वयंसेवकों को इतवारी विभाग के अनेक विभागों में शाखाएँ चलाने की जिम्मेदारी दी गई। एकदम 15 शाखाएं खड़ी हुई। मुझ पर सौंपी गयी शाखा पिछड़े वर्गीय क्षेत्र

में थी शिक्षा का प्रसार अत्यल्प, शाखा के एक बाजू में बुनकरो की अस्ती और दूसरी बाजू में 'महार' जाति के लोग रहते थे। दोनों समाज के स्वयंसेवक शाखा में आते थे। तरुणों के दो बालकों के तीन गण थे। तरुण 14–15 वर्ष आयु के हायस्कूल के छात्र थे। शाखा में सब से बड़े स्वयंसेवक हायस्कूल के छात्र थे। संघ शिक्षा वर्ग में प्रशिक्षित कोई न होने के कारण क्रमशः प्रत्येक गण का शारीरिक शिक्षा और समता का अभ्यास मैं ही कराता था। उन दिनों शाखाओं के वार्षिकोत्सव हुआ करते थे। दण्ड, खड़ग, शूल, छूरिका आदि शस्त्रों के अनेक प्रयोगों के प्रात्यक्षिक होते थे। उस वर्ष प्रयोग सिखाने का काम मुझे ही करना पड़ा। गणशिक्षकों की मामूली व्यवस्था कर उनको कार्यक्रम करने को सिखाना पड़ा। से सब काम तथा सर्वांगीण योजना करना संभव न होने के कारण उस वर्ष का कार्यक्रम अत्यंत मामूली स्तर का हुआ। दूसरे ही दिन कार्यवाह–मुख्य शिक्षकों की बैठक में "इतने निकृष्ट स्तर का कार्यक्रम मैंने कभी नहीं देखा था" ऐसा स्पष्ट अभिप्राय बालासाहब ने व्यक्त किया। कारणों से संबंध में मुझ से पूछताछ की और त्रुटियां दूर करने के लिये कहा। आगामी वर्ष में सर्वस्पर्शी विचार कर शाखा के शिक्षकों की तैयारी की। सब लोगों ने भरपूर तथा योजनाबद्ध प्रयास किये। उसवर्ष उत्सव में गत वर्ष के अनुसारही बालासाहब के साथ अन्य अधिकारी उपस्थित हुए थे। उत्सव के बाद हुई कार्यवाह मुख्यशिक्षकों की बैठक में, "मोहिते, धंतोली, धरमपेठ जैसी बड़ी शाखाओं के उत्सवों से उत्कृष्ट उत्सव" इन शब्दों में श्री बालासाहब ने कार्यक्रम की सराहना की। कार्यकर्ताओं की निर्मिती के लिये स्वावलंबन पर आधारित श्री बालासाहब की कार्यपद्धति थी।

1942 में इण्टर मिडियेट की परीक्षा उत्तीर्ण होने पर मैं प्रचारक के नाते से बाहर जाने का मेरा विचार बालासाहब के सम्मुख प्रकट किया। उस समय मैं कनिष्ट तरुण गण का शिक्षक था। मुझे नागपुर जिले में या विदर्भ के किसी जिले में एकाध स्थानपर प्रचारक के नाते से भेजेंगे ऐसी मेरी अपेक्षा थी। उस समय महाकोशल प्रांत के प्रमुख प्रचारक स्व. श्री एकनाथ रानडे प्रचारक प्राप्त करने के लिए नागपुर आये हुए थे। उन से विचार विनिमय होकर मुझे छिन्दवाड़ा जिले का प्रचारक बनाकर भेजना तय हुआ। वह जानने पर मुझे भय लगा कारण महाकोशल का यह जिला संघकार्य की दृष्टि से विलक्षण कठिन था। आज भी वह कांग्रेस का गढ़ माना जाता है।

मैं बालासाहेब के पास गया तथा मुझे उस जिले में न भेजने का अनुरोध किया न भेजने के कुछ कारण भी बताये। 1) शाखा संचालन का अभ्यास न होने के कारण जिला प्रचारक हिसाब से काम संभालना नहीं जमेगा। 2) मैं हिन्दी बोल नहीं सकता। 3) बौद्धिक वर्ग या भाषण करने का बिल्कुल अभ्यास नहीं। जिले के आयु से बड़े और प्रतिष्ठित संघचालक कार्यवाह या अन्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों से सम्पर्क करना, अपने विचार समझना आदि बातों से मैं अनभिज्ञ हूँ। बालासाहब शान्ति से सुन रहे थे। मेरा बोलना समाप्त होने पर उन्होंने "तू बहुत बड़ा है" ऐसा कहा। मैं अवाक् हुआ, शरमिंदा हुआ। "ऐसा नहीं" इतना ही कह सका। बाद में उन्होंने कहा "जो स्वयं को जानता है उसको बड़ा कहते हैं। तू कैसा है यह तू कह रहा है। इसीलिये तू बड़ा है। अरे भाई! संघ में well furnished कार्यकर्ता नहीं होता। मैं भी नहीं था– नहीं हूँ।

परंतु कार्य की आवश्यकतानुसार स्वयं को बनना पड़ता है। तू हिन्दी नहीं जानता तो सीख वह भाषा। हिन्दी बोलने का अभ्यास कर। एकनाथ जैसा कुशल तथा अनुभवी प्रांत प्रचारक प्रतिष्ठित व्यक्तियों से कैसा बोलता है, बैठक कैसा लेता है इसका अभ्यास कर। सब कुछ कर पाएगा।" उनके कहने का अनुसरण कर काम करने की आदत रहने से वैसा करता गया। उनके कहने पर छिन्दवाड़ा गया। उनके कहने के अनुसार प्रयत्न किये। स्व. एकनाथ जी का वैशिष्टयपूर्ण मार्गदर्शन प्राप्त होने से मैंने जिला प्रचारक से अपेक्षित सब कार्य पूर्ण किये। एक बार जिला संघचालक, कार्यवाह की अनुकूलता न होते हुए स्वतः निर्णय लेकर काम पूर्ण किये। "बाबू काम अच्छा करता है" इन शब्दों में एकनाथ जी जैसे कुशल और कर्तव्य कठोर अधिकारी ने श्री गुरुजी के पास मेरे काम की सराहना की थी।

संघ की कार्यपद्धति नित्य विकसनशील है। प्रारम्भ में खेल, दण्ड आदि शस्त्रों के कार्यक्रम और समता पर विशेष ध्यान रहता था। उसका बहुत आकर्षण भी था। सेना सदृश गणवेश होता था। प्रणिकिनी (Regiment) प्रमुखों को खाकी गणवेश और पदवेश के साथ यज्ञोपवित जैसा पट्टा (Cross belt) रहता था। कारण सामने आदर्श तत्कालीन (university Training Core) का था। उनमें वरिष्ठ अधिकारी सिर खुलाही रखते थे। UTC में श्री विट्ठल राव पत्की, श्री कृष्णराव मोहरीर जैसे ज्येष्ठ स्वयंसेवक थे। इसीलिये संघ की समता का स्वरूप भी वैसा ही था। अनेक UTC अधिकारियों ने स्वयंसेवकों की सैनिकी कवायत UTC के स्तर की है ऐसा प्रशंसा की थी। श्री बालासाहब को अधिकारियों का गणवेश बहुत अच्छा दिखता था। उनके गौरवर्ण के कारण वे यूरोपीय अधिकारी जैसे लगते थे। किंतु सिर खुला रखना पूजनीय डाक्टर जी को पसंद नहीं था। अतः विशेष अधिकारियों ने खाकी रूमाल (फेटा) का उपयोग करने का निर्णय हुआ। पूजनीय डाक्टर जी का वैसे गणवेश में का छायाचित्र अनेकों ने देखा होगा। इन सारे परिवर्तनों में बालासाहब का बड़ा सहभाग था। ऐसे ही अनेक परिवर्तन किये गए।

संघ गीतों की प्रथा भी उन्होंने ही शुरू की। प्रारंभ में विजयदशमी के उत्सवों में समूहगीत गाना शुरू हुआ। पहले वर्ष 5 गीतों का चयन हुआ। नागपुर कर विजयादशमी का उत्सव दो दिनों में सम्पन्न होता था। नवमी को शस्त्रपूजन और अध्यक्ष तथा सरसंघचालक के भाषण होते थे। दशमी को सीमोल्लंघन, पथ संचलन, सैनिक कार्यक्रम, अध्यक्ष और सरसंघचालक के भाषण होते थे। उस वर्ष नवमी के दिन दो। और दशमी के दिन तीन गीत गाये गये। सब को गीत पूर्णतः कण्ठस्थ होने के कारण पूरा कार्यक्रम अप्रतिम हुआ। बालासाहब ने योजनापूर्वक गीतों का चयन किया था। छोटी सरल तथा अर्थपूर्ण शब्दरचना गीतों की विशेषता थी। साथ ही कर्णमधुर लय। "खड़ा हिमालय बता रहा है, डरो न आंधी पानी में" यह एक गीत था। दो हजार स्वयंसेवकों ने खुली अवाज में एक ताल और लय में गाये गीत सुनकर श्रोतृवर्ग रोमांचित हुआ था।

बालासाहब की मनुष्यों को परखने की कला और क्षमता अवर्णनीय है। पू. डाक्टरसाहब का यह गुण उनमें पूर्णतः संक्रमित हुआ है। केवल संघकर्य में ही नहीं, अपितु समाचार पत्र, शैक्षणिक संस्था, बैंक, सेवा प्रकल्प, राजकीय पक्ष, सामाजिक संस्था आदि अनेक क्षेत्रों में कार्यकर्ताओं का चयन करते हुए उनको उन क्षेत्रों में कार्यरत किया। कुछ सक्षम व्यक्ति अन्य कार्यक्षेत्रों में फंसे थे उनको उन क्षेत्रों से अलग कर नियोजित क्षेत्रों में सम्मिलित करने की दृष्टि से प्रोत्साहित किया। संघकार्य में सफलता तथा क्षमता के साथ कार्य करनेवाला अधिकारी या प्रचारक अन्य क्षेत्रों के लिए उपयुक्त लगा, तो उसे शाखा कार्यों से मुक्त कर नियोजित क्षेत्र का दायित्व सौंपा गया। श्री बापूराव भिशिकर, श्री बाबूराव वैद्य आदि शैक्षणिक क्षेत्र में योग्यतापूर्वक काम करते थे। उन्हें ऊपर के अत्युच्च पर प्राप्त हो सकते थे। किन्तु बालासाहब के निर्देश के अनुसार उनकी समाचार पत्रों के क्षेत्र में नियुक्ति हुई। श्री भास्करराव कलंबी, श्री राम गोपालन्, श्री अशोक सिंहल आदि कार्यक्षम तथा यशस्वी कार्यकर्ताओं को कार्यमुक्त कर अन्य क्षेत्रों का कार्यभार सौंपा गया। उन क्षेत्रों का आज का विस्तार और प्रभाव देखने पर उनकी योग्यता का परिचय मिलता है।

अकृत्रिम आत्मीयता

नेतृत्व करनेवाले के मन में अनुसरण रहना अनिवार्य है। ऐसी आत्मीयता के कारण स्वयंसेवकों की कार्यनिष्ठा दृढ़ होती है। कार्य को दृढ़ता प्राप्त होती है। पू. श्री बालासाहब सब छोटे–बड़े स्वयंसेवकों के प्रति आत्मीयता रखते हैं। प्रारम्भ में शाखा में आनेवाले स्वयंसेवकों के पालकों की आर्थिक स्थिति साधारण सी रहती थी। परतु गणवेश का खर्च तथा गुरुदक्षिणा समर्पण, के लिए अनेक स्वयंसेवक व्यक्तिगत खर्चों में काटछाट कर धन एकत्रित करते थे। फिर भी गुरुदक्षिणा अपर्याप्त रहती थी। घोष की निर्मिती, पू. डाक्टर जी का प्रवास खर्च उत्सवों के खर्च आदि के लिये पैसा खड़ा करना पड़ता था। श्री बालासाहब के प्रोत्साहन के कुछ अभिनव प्रयोग स्वयंसेवकों ने किये थे। उन दिनों में श्रीमंत बुटी घराने में श्रीकृष्ण जन्मोत्सव धूमधाम से सम्पन्न होता था। जन्माष्टमी नवरात्रि में प्रतिदिन ब्राह्मण भोजन का कार्यक्रम होता था। सबको दक्षिणा दी जाती। उस भोजन में अनेक स्वयंसेवक रेशमी धोती पहन कर सम्मिलित होकर, प्राप्त हुई दक्षिणा कार्यालय में जमा करते थे। उस धन से घोष के वाद्य खरीदने में सहायता मिलती थी। अन्यथा स्वयंसेवक कहीं भी अनाहूत–भोजन करने न जाते न दक्षिणा का स्वीकार करते। परंतु संघकार्य के लिये आवश्यक कुछ भी कार्य करने की नित्य सिद्धता की आदत लगी।

स्वयंसेवकों की बीमारियों में औषधि योजना, शुश्रुषा, चिकित्सकों से चिकित्सा जैसे छोटे–मोटे व्यवहारों द्वारा स्वयंसेवकों को आत्मीयता के सूत्र में बांधने की बालासाहब की विशिष्ट पद्धति थी। शाखा के स्वयंसेवकों को भी वही आदत हुई। जिनकी व्यवस्था नहीं थी ऐसे नागपुर के तथा बाहर के बीमार स्वयंसेवकों को नागपुर के स्वयंसेवकों के घरों में रखा जाता था। विश्रांती के लिये भी परिचित स्वयंसेवकों के घरों में रखा जाता। महाल का कार्यालय बनने पर कुछ बीमार कार्यकर्ताओं के ही नहीं अपितु उन

परिवार के लोगों पर भी उनका बारीकी से ध्यान रहता था। विशेषतः प्रचारक या संघशिक्षा वर्गों में शिक्षक के नाते जानेवाले स्वयंसेवकों के परिवारों की ओर वे ध्यान रखा करते थे।

कार्यकर्ताओं से असीम आत्मीयता के व्यवहार के कारण उनका नाराज होना या वाक्ताडन से कार्यकर्ताओं को योग्य दिशा मिलकर उनके जीवन में परिवर्तन हुआ। सामान्य स्वयंसेवकों में अमर्याद परिश्रमशीलता का अविष्कार हुआ। इस विषय के दो उदाहरण।

दैनंदिन शाखा चलाते समय प्रमुखों के हाथों गलती होना कोई अस्वाभाविक बात नहीं। उसमें दुरूस्ती करने का काम प्रमुख को ही करना पड़ता है। इस विषय में श्री बालासाहब विशेष जागृत रहते थे। स्वयंसेवकों के ध्यान में गलती ला देने के मार्ग विशेष प्रकार के होते थे। 1955–56 तक शीतकालीन शिविर तैयार करने का कार्य स्वयंसेवक ही करते थे। शिविर के पूर्व एक माह प्रत्येक रविवार को तथा छुट्टी के दिन तरुण स्वयंसेवकों को शिविर स्थान जाकर काम करना होता था। एक साल पहिले ही रविवार को 3–4 स्वयंसेवक शिविर स्थान पर विलंब से पहुंचे। शाखा की जिम्मेवारी वहन करनेवाले स्वयंसेवकों की यह त्रुटि बालासाहब सहन नहीं कर पाये। उन्होंने तीव्र शब्दों में कहा the most importamt works has been handed over to the most incompetanat men....." इतना बोलकर बैठक समाप्त की। सभी के मनों पर इन शब्दों की फटकार लगी। सभी चुपचाप घर लौटे। इस वाक्ताडना से कोई नाराज नहीं हुए। दूसरे रविवार को सभी नियोजित समय पर उपस्थित थे।

1947 के दिसम्बर माह में नागपुर तथा विदर्भ के तरुण स्वयंसेवकों का शिविर पारडी में हुआ था। शिविर का निर्माण नागपुर के स्वयंसेवकों ने किया था। शिविर के समाप्ति पर तंबू राहुटियां, टाट के मण्डप उतारने का काम भी उन्होंने किया था। मंडप पर चढ़कर टाट, बांस नीचे उतारना, अलग एकत्रित कर गट्ठे बांधना, ऊपर चढे हुए स्वयंसेवकों की सहायता करना ऐसा काम का बटवारा हुआ। स्वतः श्री बालासाहब काम पर ध्यान देने के लिये वहां बैठे थे। सब दूर ध्यान दे रहे थे। काम में व्यवधान न हो इसलिये ऊपर काम करनेवालों को पानी पहुंचाना, रात को 8–9 बजे नाश्ता पहुँचाना आदि काम नीचे से किये जा रहे थे। पानी समाप्त हुआ तो भी काम अखण्ड रूप से चल रहा था। मध्य रात्रि में ऊपर का काम समाप्त हुआ। श्री आलासाहब ने पुकारा "अरे आनंद, काम समाप्त हुआ, नीचे उतर" यह सुनकर बल्ली के एक छोरपर बैठकर काम में व्यस्त आनंद, (आज के सेवानिवृत उपअभियंता श्री आनंरराव भास्करे), कर्तव्यपूर्ती हुई यह जानकारी मिलने पर शक्तिपात हुए जैसा नीचे गिर पड़ा। शक्ति का आखरी अंश रहते तक वह काम कर रहा था। सब स्वयंसेवक वहीं सोकर प्रातः चाय पीकर घर गये।

सुसंवाद

संघ जैसे पारिवारिक आत्मीयता के अधिष्ठान प्राप्त सर्व साधारण व्यक्तियों की संघटना में कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्यों का पालन अपरिहार्य होता है। संघटना का प्रमुख अधिकारी और कार्यकर्ताओं में परस्पर विचार विमर्श तथा सुसंवाद की आवश्यकता होती है। सभी प्रश्नों पर सब का मतैक्य हो नहीं सकता। किन्तु विचार विनिमय के बाद लिया गया निर्णय अपना ही है ऐसा समझकर उसको मान लेना आवश्यक होता है। संघटन के प्रमुख का मनोगत पहचान कर उसके अनुसार अपने आचार, विचार और कृतियों को मोड़ना पड़ता है। निश्चित की गई योजनाओं की सर्वसाधारण स्वयंसेवकों को जानकारी देकर योजना यशस्वी बनाने की दृष्टि से आयोजित एकाध बैठक में एकाध स्वयंसेवक ने अलग सूर लगाया तो बैठक का हेतु असफल होता है।

पू. डाक्टर जी के समय का एक किस्सा बताया जाता है। गुरुदक्षिणा के विषय में एक बैठक थी। ऐसी बैठक में कई लोग अपना दक्षिणा समर्पण का संकल्प प्रकट करते हैं। उस बैठक के प्रारम्भ में एक प्रमुख कार्यकर्ता ने अपना कम आकड़ा बताया। परिणामतः उसके बाद सभी स्वयंसेवकों ने कम ही आकड़े बताये। बैठक समाप्त होने पर पू. डाक्टरजी ने उसको कहा, "तुम्हे अधिक बड़ा आकड़ा बताने में क्या परेशानी थी? प्रत्यक्ष में जैसा जमता वैसा करने मे कौन रोकने वाला था? तुम्हारी कृति के कारण अपेक्षित वायुमंडल निर्माण नहीं हो पाया। यह ठीक नहीं हुआ"। श्री बालासाहब इस विषय में बहुत सतर्क रहते थे।

1947 की बात होगी। संघ शिक्षा वर्ग के कार्यक्रम और स्वरूप इस विषय की चर्चा, विचार विनिमय की बैठक श्री गुरुजी के निवास स्थान पर रात को 9 बजे प्रारम्भ हुई इस बैठक में श्री बालासाहब, श्री एकनाथ रानडे, श्री अप्पा जी जोशी, श्री कृष्णराव मोहरीर आदि प्रमुख कार्यकर्ता थे। उस समय मैं विभाग प्रमुख था। किन्तु कई बार मैं रात को श्री गुरुजी के अनौपचारिक वार्तालाप में उपस्थित रहता था। उस दिन मैं और हमारे भाग कार्यवाह श्री पांडुरंगपंत सावरकर श्री गुरुजी के घर गये थे। बैठक शुरू हुई। हम लोग अनेक बार रात्रि के बैठकों में उपस्थित रहते थे। इसलिये हमें किसी ने उठ जाने को नहीं कहा। चर्चा का विषय था, "संघशिक्षा वर्गों में कार्यक्रमों का स्वरूप एक जैसा हो या प्रान्त की सुविधानुसार हो। कइयों ने सभी प्रांतों में स्वरूप एक जैसा हो ऐसा मत प्रदर्शित किया। इस मत के कारण भी अताये। किन्तु श्री एकनाथजी का "प्रान्तों की सुविधानुसार कार्यक्रमों की रचना हो, शूल, खड्ग आदि की शिक्षा व्यवस्था हो वैकल्पिक ऐसा भिन्न मत था। चर्चा काफी देर तक चली। श्री गुरुजी का विचार भी सभी प्रान्तों में समान कार्यक्रम रखने का था। अनेक कार्यकर्ताओं ने वैसे ही विचार रखे। बालासाहब कुछ बोले नहीं। श्री गुरुजी का विचार ध्यान में आने के बाद भी श्री एकनाथ जी अपना आग्रह छोड़ने को तैयार नहीं थे। उनके जैसे ज्येष्ठ कार्यकर्ता के मत को दुर्लक्षित कर निर्णय लेना श्री गुरुजी को भी अड़चन का लगा। उनके बोलने में तीव्रता आयी। वायुमण्डल गरम होने लगा। सभी अस्वस्थ हुए निर्णय के बिना ही बैठक समाप्त होगी क्या ऐसा लगने लगा। शिक्षा वर्ग के दिन पास आने के कारण निर्णय लेना आवश्यक था। पूर्ण परिस्थिति का विचार कर श्री बालासाहब आगे बढ़े। उन्होंने कहा "हम लोग, यहां उपस्थित सभी लोगों का मत जानकर

बहुमत का निर्णय स्वीकार करेंगे। प्रथम मैं अपना मत बताता हूँ। "सब कार्यक्रमों का स्वरूप एक हो यह मेरा मत है।" उसे बाद उस बैइक में उपस्थित सभी को उनके मत पूछे गये। सभी ने क्रमशः बालासाहब का अनुसरण किया। श्री सावरकरजी के बाद मेरी बारी आयी। मैं बोल नहीं सका। श्री बालासाहब ने मुझे जोर से पूछा। मेरा मत सावरकर जी जैसा ही है इतना ही मैं बोल पाया। निर्णय निश्चित होने पर वायुमण्डल शांत हुआ तथा हास्यविनोद शुरू हुए। संघ जैसे स्वयंअनुशासन पर अधिष्ठित संघटना के सर्वोच्च पदपर बैठे व्यक्तिपर संघटना के सभी घटकों की निरपवाद तथा अविचल श्रद्धा, निष्ठा रहना यह संघटनशस्त्र का प्रमुख नियम है। उस नियम के अनुसार श्री बालासाहब की भूमिका सभी को अनुकरणीय लगी। बैठक में अनेक लोगों को पूजनीय डाक्टरजी की याद आई।

अद्‌भुत निर्णयक्षमता

बालासाहब के महत्व के ऐतिहासिक निर्णय लेने की अद्‌भुत क्षमता है। 1948 के बंदीकाल में सभी के आदरणीय तथा वयोवृद्ध नेता श्री व्यंकटराम शास्त्री को संघ तथा शासन के संबंध सुधारने में असफलता मिलनेपर उन्होंने इस कार्य से निवृत्ति ली। किन्तु सूत्र खंडित होना शासन के लिये अड़चन का था। उन्होंने कुछ व्यक्तियों का उपयोग कर परिस्थिति सम्हालने का प्रयत्न किया। उस समय श्री भय्याजी दाणी तथा श्री बालासाहब कारामुक्त हुए थे। शासन की ओर से भेजा हुआ व्यक्ति उनसे मिला। उसने श्री गुरुजी से प्रत्यक्ष वार्तालाप की इच्छा दर्शायी। उसे इन दोनों ने ही बताया कि "श्री गुरुजी कारावास में हैं। उनको बाहर की परिस्थिति ज्ञात नहीं, इसलिये जो कुछ बोलना हो वह हम दोनों से कहो। उस बातचीत में वह मध्यस्थ व्यक्ति बंदी उठाने के लिये कुछ आश्वासनों की बात करते रहे। उस समय दोनों ने बताया की, संघ पर से प्रतिबंध हटाने के लिये सत्याग्रह के अतिरिक्त अन्य मार्ग हमें उपलब्ध हैं। उनका हम उपयोग कर सकते हैं। सरदार पटेल जैसे चतुरस्त्र और कूटनितिज्ञ व्यक्ति को इस कथन में छिपा गूढ़ अर्थ समक्ष में आ गया। राजकीय पक्ष इस हिसाब से खड़ा रहनेवाला संघ शाखाकार्य की मर्यादा में चलनेवाले संघ से अधिक धोकादायक होगा, यह उनकी ध्यान में आ गया। इसलिये दिल्ली के अनेक जेष्ठ संघ अधिकारियों से परिचित श्री मौलीचंद्र शर्मा को नागपुर भेजा गया। मध्यप्रदेश के गृहमंत्री पं. द्वारकाप्रसाद मिश्र भी उनकी सहायता कर रहे थे। श्री गुरुजी को संघ की भूमिका स्पष्ट करनेवाला पत्र शासन के पास भेजना चाहिये, ऐसा उन्होंने सुझाया। गुरुजी को यह कतई मान्य नहीं था। श्री बालासाहब ने भी यह सुझाव अमान्य किया। आखिर शासन को झुकना पड़ा। शासन के बदले श्री मौलीचंद्र के नाम पत्र भेजकर शासन की प्रतिष्ठा को धक्का न पहुँचने का समाधान भी शासक को प्राप्त होनेवाला था। श्री मौलीचंद्र के सुझावपर श्री गुरुजी ध्यान देंगे नहीं यह जानकर स्वतः बालासाहब ने श्री गुरुजी को संदेशा भेजा और गुरुजी ने तुरन्त आवश्यक पत्र श्री शर्मा को दिया। इसमें भी शासन ने टेढ़ी चाल चली। 11 जुलाई को शासन ने संघ से प्रतिबंध हटाया नहीं जाएगा, जाहिर किया। उस समय नागपुर के एक अधिकारी ने कहा कि, "कल प्रतिबंध उठेगा।"

गिरे तो भी हमारा नाक ऊपरही था, यह दिखाने का शासन का प्रयत्न देखकर, अनेक लोगों को आश्चर्य लगा।

भावविश्व भी बनाया

दैनिंदिन शाखा पद्धति के माध्यम से स्वयंसेवकों की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, वैचारिक तथा भावनिक, प्रगति के साथ उनका भावविश्व भी सघन तथा समृद्ध बने इसलिये श्री बालासाहब सतत प्रयत्नशील थे। उनका स्वयं का वाचन का क्षेत्र विस्तृत था। विशेषतः राजनीति, इतिहास, चर्चिल के युद्ध विषयक संस्मरण तथा युद्ध विषयक पुस्तकें, महान पुरूषों के जीवनचरित्र, चुनी हुई अंग्रेजी और मराठी उपन्यास की पुस्तकें, स्वातंत्र्यवीर का चरित्र तथा उनके लिखे हुए राजकीय तथा समाजिक विषयों के ग्रंथ, लेख, काव्य आदि का पठन–पाठन भी उन्होंने किया है। उनके सुभाषित उन्हें कंठस्त हैं। अनौपचारिक वार्तालाप, बौद्धिक वर्ग, तथा सार्वजनिक भाषाणों का सुभाषितों का योग्य उपयोग, इन बातों से उनकी क्षमता का परिचय मिलता है। वे नियमित रूप से समाचारपत्र ध्यानपूर्वक पढ़ते थे। स्वयंसेवकों के संपादित किए हुए 'तरुणभारत' आदि समाचार पत्रों में समाचार संकलन, संपादन, विचारप्रदर्शन, कार्यक्रमों की प्रसिद्धि आदि विविध अंगों के संपादन में दोष या अनुचित भाषा प्रयोग होने पर वे संबंधित व्यक्ति से बातचीत कर आवश्यक सुधार करवाते थे। समाचारपत्रों में सभी मतान्तरों को स्थान रहना चाहिए, यह उनका आग्रह है। ऐसे समृद्ध अनुभवों का अनेक स्वयंसेवकों को लाभ होकर योग्य दिशा मिलती है।

1960 में राज्य पुनर्रचना होनेपर इतवारी शाखा के शासकीय तथा अन्य सेवाओं में कार्यरत लगभग 150 कार्यकर्ता पश्चिम महाराष्ट्र तथा महाकोशल में गये! कुछ लोग इतवारी भाग से नयी बस्तियों में रहने गए। इतवारी शाखा का चेहरा ही बदल गया। 1961 में इस प्रकार इधर–उधर गए हुए स्वयंसेवकों का एक दिन का एकत्रीकरण कोरडी देवी मंदिर परिसर में हुआ। इस सम्मेलन में श्री बालासाहब पूर्णकाल उपस्थित थे। उस रात 9 से 12 बजे तक श्री बालासाहब ने स्वातंत्र्यवीर सावरकर के "माझे मृत्युपत्र" इस काव्य की प्रत्येक कड़ी कहकर उसमें अंतरनिहित संकल्पना पर भावपूर्ण भाष्य किया था। विशेषतः "हे मातृभूमि तुजला मन वाहियले। वक्तृत्व वाग्विभवही तुज अर्पियले। तू तोचि अर्पिली नवी कविता रसाला। लेखाप्रति विषय तूचि अनन्य झाला।" इस कड़ी के बाद की सब कड़ियों का भाष्य सुनकर अनेक स्वयंसेवक भावमग्न हुए। कार्यक्रम कब समाप्त हुआ इसका पता ही नहीं चला। कुछ समय सब लोग नीरव शांति में बैठे थे। मेरे जीवन को दिशा देनेवाला यह एक अविस्मरणीय अनुभव है।

राजनीति का सम्यक ज्ञान

राजनीति के संदर्भ में अनेक पहलुओं का उनका विवरण, विश्लेषण और मूल्यांकन वस्तुनिष्ठ, गहरा और दूरगामी विचार का होता था। उस क्षेत्र के विविध प्रवृत्ति–प्रकृति के नेता और कार्यकर्ताओं के व्यक्तित्व

का सही आकलन उनको था। इसीलिये चुनाव के उम्मीदवार या पक्षकार्य करनेवाले सक्षम कार्यकर्ताओं के चयन के विषय में उनसे सदैव विचार–विमर्श होता था। अतः सभी चुनावों के समयजनसंघ का सहकार्य पाने के लिये अन्य समय मुंह न दिखानेवाले अन्यान्य पक्षों के प्रमुख नेता महल कार्यालय के चक्कर काटते हुए दिखाई देते थे। दिल्ली के राजकरण में घुटे हुए अनेक बड़े–बड़े नेता बालासाहब के परिचय के थे और आज भी हैं। विशेषतः आपात्काल के बाद के दिल्ली कार्यालय में श्री बालासाहब के वास्तव्य में श्री बालासाहब से मिलने आये नेताओं के नाम प्रकाशित किये तो कई लोगों को आश्चर्य लगेगा। मंत्रिमंडल के मंत्रियों को खुल्लमखुल्ला संघ कार्यालय में आना अड़चन का लगता था, इसलिये कुछ लोगों को बालासाहब उनके बंगलों पर जा कर मिले। भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई की संघ के विषय में विरोधी भावना सर्वज्ञात है। किन्तु संघ की ताकत के कारण इंदिरा गांधी को चुनाव में मुंह की खानी पड़ी, आपात्कालीन स्थिति हटायी गयी और जनता पक्ष शासनाधिष्ठित हुआ यह जानने पर उनका दृष्टिकोण बदल गया। उनसे भी बालासाहब मिले थे। प्रधानमंत्री रहते हुए वे जब नागपुर आये थे तब बालासाहब भी नागपुर में होने का समाचार मिलने पर रात को ही राजभवन से डॉ. हेडगेवार भवन में दूरध्वनि कर बालासाहब से बात की तथा कुशल समाचार पूछा। जगजीवनराम जी के घर पर तो बालासाहब भोजन पर भी गये थे।

पत्र लिखने की अनिच्छा

बालासाहब को स्वयं के हाथ से पत्र लिखने की इच्छा नहीं होती थी। उनके 20–21 वर्षों के सरसंघचालकत्व के कालखंड में उन्होंने अपने हाथ से लिखे हुए पत्रों की संख्या 10 के ऊपर नहीं होगी। मैंने उन्हें एकबार कहा था कि, "पत्र लिखने की इतनी अनिच्छा होते हुए प्रत्येक परीक्षा में आप प्रथम श्रेणी में कैसे उत्तीर्ण होते थे? इस पर उन्होंने कहा कि "पत्र लेखन और परीक्षा में प्रश्नों के उत्तर लिखना, ये दो अलग विषय हैं। उनमें बहुत फरक है।" 1973 के पूर्व सभी पत्रों को पू. गुरुजी स्वयं उत्तर लिखते थे। डा. आबाजी थत्ते और स्व. श्री कृष्णराव माहरीर पत्रों के उत्तर लिखते थे। अतः संघसंबंधित पत्र लिखने का काम बालासाहब को नहीं करना पड़ता था। आवश्यकता पड़ने पर डा. आबासाहब या कृष्णराव को पत्र लिखने के लिये वे कह देते। उनके प्रवास के विषय में कई पत्र मैंने भी लिखे। सरसंघचालक बनने पर पत्रों के उत्तरों की उनसे अपेक्षा होना स्वाभाविक था। तब पत्रों के प्रमुख आशय वे बताते थे और मैं अपने हाथ से पत्र लिखता था टंकलिखित करवाता और वे हस्ताक्षर करते। केवल पत्र ही नहीं, संदेश, अभिष्टचिंतन, विजयादशमी उत्सव के भाषण, प्रश्नावलियों के उत्तर, व्यक्तिचित्रण, पुस्तकों को आर्शीवाद या प्रस्तावना के संदर्भ में भी यही सिलसिला चलता था। आपात्काल की स्थिति में मार्गशीर्ष शु. 5 को उनके जन्मदिन पर येरवडा कारागृह में 3–4 हजार पत्र भेजे गये। वहां के संघ के अधिकारियों ने कुछ अच्छे अक्षरवाले स्वयंसेवकों की लेखनिक के रूप में नियुक्ति की। उन्होंने श्री बालासाहब के कहने के अनुसार उत्तर लिखे और बालासाहब ने उन पर हस्ताक्षर किये थे।

अपने हाथ से पत्र लिखने का अभ्यास न रहने के संदर्भ में तत्कालीन कार्यालय प्रमुख स्व. श्री पांडुरंगपंत तैयार करते थे। और सरकार्यवाह हस्ताक्षर करते थे। ऐसे ही एक पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिये बालासाहब को एक अच्छी सी झरनी भेंट में (फाऊण्टन पेन) दी गई थी। हस्ताक्षर करने के लिये बालासाहब ने झारनी खोली तब उसमें की स्याही सूख चुकी थी। इसलिये उन्होंने पांडुरंगपंत के पास से झारनी मांगी। पंत हंसते–हंसते कहा प्रतिदिन कुछ लिखने पर स्याही सूखेगी नहीं और ऐसा प्रसंग नहीं आयेगा। उस पर क्या लिखू? यह प्रश्न पूछने पर पंत ने कहा, "रामनाम लिखाकरिये।" बालासाहब कहने लगे। "बाबू ने मूझे संध्यावंदन करने को कहा, अब तुम राम राम लिखने को कह रहे हो।" वहां बैठे हुए सभी लोग ठहाका मार कर हंस पड़े।

श्रद्धाओं का सम्मान

श्री बालासाहब ईश्वर का अस्तित्व मानते हैं। योग्य प्रथा पालन का आग्रह रखते हैं। किन्तु संध्यावंदन, स्तोत्रों का पाठ, आध्यत्मिक ग्रंथों का पाठन, नित्य नैतित्तिक कर्म आदि के संबंध में उदासीन थे। उन्हें बुद्धिवादी माना जाता है। एक बार उन्होंने कहा कि, "मुझे संघ में का कम्युनिस्ट कहते हैं।" किन्तु उन्होंने अपने विचार किसी पर लादने का प्रयास नहीं किया। उनके सहकारियों में अनेक नित्योपासना करते थें किन्तु बालासाहब ने कभी टोका नहीं। मेरे जैसे निकटवर्तियों की मजाक करते थे किन्तु किसी के श्रद्धाओं की उन्होंने अवहेलना नहीं की। इस संदर्भ में एक उदाहरण से उनका दृष्टिकोण स्पष्ट होता है।

नागपुर की पिछड़ी हुई बस्तियों की शाखा के मुख्यशिक्षक अब्राह्मण होते भी एकाद कर्मठ ब्राह्मण जैसे आचारधर्म का पालन करते थे। वे पदवी परीक्षा में तत्त्वज्ञान यह विषय लेकर उत्तीर्ण हुए थे। तत्तवज्ञान की पुस्तकें, ज्ञानेश्वरी, तुकाराम जी की गाथा नितय पठन करते। अतः तात्त्विक चर्चा करना उनको अच्छा लगता। किन्तु बुद्धि के अभाव में, धारणा स्थिर नहीं थी। उन कार्यकर्ताओं से बालासाहब का बचपन से परिचय था। उनकी पत्नी और कन्या से भी सुइर थी। वे कार्यकर्ता होने के नाते घर का वायुमण्डल काफी खुला था। घर आनेवालों से पत्नी की मुक्तरूप से बातचीत होती थी। किन्तु उस कार्यकर्ता की बुद्धि परिपक्व न होने से उनके मन में पत्नी के चारित्र्य के विषय में संदेह पैदा हुआ। मन का संतुलन खो गया। श्री बालासाहब ने देखा मुझसे कहा, "अरे तू उसे तुम्हारे खातखेडकर महाराज के पास ले जा।" श्री खातखेडकर महाराज मेरे छोटे भाई के श्वसुर थे। साक्षात्कारी पुरुष थे। उनके पास कार्यकर्ता को ले जाने के लिये कहने पर मैंने पूछा, "आपका इन बातों पर बिल्कुल विश्वास नहीं, फिर भी आप मुझे यह काम क्यों बता रहे हैं?" उस पर उन्होंने कहा, "मेरा विश्वास नहीं, किन्तु उनका है ना? सब उपाय–सब पथ हो चुकी हैं। यह उपाय एक पैथी के रूप में करने में क्या आपत्ति है? वह ठीक होने से मतलब है। पैथी का दुराग्रह क्यों?"

मैं उस कार्यकर्ता को महाराज के पास ले गया। उनको पूर्वकल्पना दी गई थी। वह कार्यकर्ता लगभग एक घण्टा उनके सामने बैठा। 45 मिनिट तक उसका भाषण अखण्ड चल रहा था। विषय अध्यात्म ही था। ज्ञानेश्वरी, गाथा आदि ग्रंथों की ओवी, अभंग आदि बोले जा रहे थे किन्तु अब बोलना असम्बद्ध था। मैं भी बैठा था। थकने पर उसका बोलना बन्द हुआ। बाद में महाराज ने कहा, "आप व्यंकटेश स्तोत्र का नियमित रूप से पाठ करिये" उसके माथे पर विभूति लगाई। विभूति देकर वह सुबह शाम माथे पर लगाने को कहा। योगायोग से वह कार्यकर्ता दो माह में पूर्णतः स्वस्थ हुआ। मन में का संदेह का कीड़ा हट जाने से वैवाहिक जीवन भी सुचारू रूप से चलने लगा।

लक्षणिय परिवर्तन

सरसंघचालक बनने के बाद बालासाहब के दैनंदिन जीवन में लक्षणिय परिवर्तन हुआ। रघुकुल रीत के अनुसार संघरीत भी प्रतिष्ठित हुई है। पू. डाक्टरजी ने उस रीति का स्वतः के जीवन के छोटे–मोटे व्यवहारों में अविष्कार किया था। उसका बाद में बहुतांश स्वयंसेवकों को अभ्यास हुआ। सरसंघचालक को स्वयंसेवकों का अत्युच्च तथा सर्वश्रेष्ठ आदर्श माना जाता है। उनका बोलना, चलना, कृति, मजाक करना आदि अकृत्रिम व्यवहारों में से स्वयंसेवकों को दिशा और प्रेरणा मिलती है। संघ के बाहर के लोगों को संघ का परिचय मिलता है। आज पू. डाक्टर जी को देखे हुए बहुत कम लोग हैं। 33 वर्ष के सरसंघचालकत्व के कार्यकाल में श्री गुरुजी ने विशिष्ट आदर्श प्रस्थापित किया था। देश के कोने–कोने में फैले हुए संघकार्यरत स्वयंसेवकों का विशाल समूह, तथा संघ के हितैषियों का प्रचण्ड समाज बालासाहब से भी वही अपेक्षा करता था। यह समझते हुए बालासाहब ने अपने व्यवहार में स्वाभविक ही आवश्यक बदल किये।

सरसंघचालक होने के पूर्व आधुनिक, शिक्षित और स्वा. सावरकर के कहने के अनुसार श्रुतिस्मृति पुराणोक्त नहीं बल्कि अद्ययावत् चीजों को प्रमाण मानते हुए जीवन रचना करने का उनका विचार था। दैनंदिन शाखाकार्य को छोड़कर संध्या वन्दन की तैयारी करने के विषय में लोग पूछा करते। साधारण स्वयंसेवकों की श्रद्धावान मानसिकता को देखकर बालासाहब ने अपने जीवन में कुछ बातों का प्रारम्भ किया। स्नान के पश्चात् अगरबत्ती जलाकर गीता का एक अध्याय पढ़ना उन्होंने प्रारंभ किया। यह बदल इतना स्वाभाविक रीति से हुआ कि उनके निटिवर्ती मित्रों के कई दिन ध्यान में ही नहीं आया। यह परिवर्तन लागों को बहुत अच्छा लगा।

सरसंघचालक को परम पूजनीय कह कर संबोधित किया जाता है प. पू. डाक्टरजी को बगैर पूर्व सूचना के ही "सरसंघचालक" घोषित किया गया तथा उनके अग्नि जैसे अंतरबाह्य पवित्र जीवन को तथा शुक जैसे वैराग्ययुक्त, तपःपूत जीवन को देखकर उन्हें परमपूजनीय कहा गया। पू. गुरुजी को भी वह विशेषण पूर्णतः शोभा देता था। उसी सूत्र का अनुसरण कर लोगो ने बालासाहब को वह विशेषण लगाना

शुरू किया। परमपूजनीय कहा गया। पूज्य गुरुजी को भी वह विशेषण पूर्णतः शोभा देता था। उसी सूत्र का अनुसरण कर लोगों ने बालासाहब को वह विशेषण लगाना शुरु किया। परमपूजनीय यह विशेषण सरसंघचालक इस पर का है। पू. श्री गुरुजी ने भी सरसंघचालक हिसाब से श्री बालासाहब के नियुक्ति पत्र में "परमपूजनीय सरसंघचालक मा. श्री बालासाहब देवरस ऐसा उल्लेख किया था। स्व. श्री माधवराव मुले भी पत्रों में ध्यान रखकर" परमपूजनीय सरसंघचालक मा. श्री बालासाहब देवरस ऐसा ही उल्लेख करते थे। महाराष्ट्र के अनेक प्रमुख कार्यकर्ता, मा. श्री बालासाहब देवरस ऐसा उल्लेख करते थे। किन्तु सर्वसाधारण स्वयंसेवकों को "प. पू. श्री बालासाहब देवरस" लिखना ही सुविधा का लगता था। बालासाहब को वह पसन्द नहीं था। मैंने उन्हें कहा की, इस पर नाराजी भी प्रकट करते थे। किन्तु एक बार मैंने उन्हें कहा कि, "परम पूजनीय शब्द का प्रयाग आपको पसन्द नहीं, श्री गुरुजी को भी पसन्द नहीं था। किन्तु स्वयंसेवकों की श्रद्धा का आदर करने के लिए वह मानना चाहिए ऐसी मेरी बिनती है।" यह कहने पर वे थोड़ी देर अन्तर्मुख हुए और "तुम्हें योग्य लगेगा वह करो" यह कहकर चुपचाप रहे। इसके बाद इस संदर्भ में उन्होंने आपत्ति नहीं उठायी।

बड़ों को दायित्व

उनपयन संस्कार, विवाह, जन्मदिवस, षष्टयब्दिपूर्ति आदि निमित्त भेजी गयी निमंत्रण पत्रिकाओं को उत्तर देते समय प्रथम "आपको सुखी और समृद्धिपूर्ण वैवाहिक जीवन प्राप्त हो" या "आपको प्रदीर्घ आयुरारोग्य प्राप्त हो" ऐसा शब्द प्रयोग होता था। बाद में कुछ पत्रों में "आपके प्रदीर्घ आयुरारोग के लिये भगवान से प्रार्थना करता हूँ" ऐसा मैं लिखने लगा। कारण गुरुजी के पत्रों में ऐसा ही उल्लेख देखने की मुझे आदत पड़ी थी। बालासाहब को यह शब्द प्रयोग अच्छा नहीं लगता था। किन्तु जब मैंने कहा कि "स्वयंसेवक अपने जीवन के महत्त्वपूर्ण मोड़ पर आपका शुभाशिर्वाद प्राप्त करने के लिये निमंत्रण पत्रिका भेजते हैं। अपने परमश्रद्धेय सरसंघचालक अपने लिये इश्वर से प्रार्थना करते हैं, यह अनुभूति प्रेरक तथा जीवन को योग्य दिशा देनेवाली होती है।" इसके बाद उन्होंने इस संदर्भ में आक्षेप नहीं किया। प्रारम्भ में कोई झुक कर पादस्पर्श कर प्रणाम करे यह उन्हें पसन्द नहीं था। किन्तु बाद में उन्होंने वह चला लिया। सामाजिक जीवन प्रवाह में वैयक्तिक रूचि को स्थान नहीं रह जाता इस विचार को व्यवहार में उन्होंने स्वीकारा। श्रद्धास्थान बने हुए व्यक्तियों के खानपान के विषय में भी साधारण लोगों की विशिष्ट अपेक्षाएं होती हैं। बालासाहब ने अपने आहार के विषय में भी आपेक्षित परिवर्तन किये।

सरसंघचालक बनने के पहले श्री बालासाहब, बुद्धिवादी, इहवादी तथा पूर्णतः ऐहिक दृष्टिकोण रखनेवाले व्यक्ति के रूप में परिचित थे। कथाकीर्तन, उत्सव, यज्ञयाग, साधुसंतों से भेंट आदि विषयों को उनके जीवन में कोई स्थान नहीं था। अतः इस संदर्भ में उनको निमंत्रण देने की लोग हिम्मत नहीं करते थे। किन्तु सरसंघचालक बनने के बाद वे निमंत्रण का आदर कर सब कार्यक्रमों में उपस्थित रहने लगे। श्री

शंकराचार्य आदि आदरणीय व्यक्तियों को प्रणाम कर उनके आर्शीवचन स्वीकारना आदि क्रियाओं का अभ्यास हुआ है। उनके जन्मदिन पर अनेक स्वयंसेवक सत्यानारायण की पूजा करते हैं। ऐसे स्वयंसेवकों के घर जाकर अब वे प्रसाद ग्रहण भी करने लगे। उनकी बिमारी के समय एक स्वयंसेवक ने श्री सप्तशती का पाठ किया। वह प्रतिदिन तीर्थ लेकर कार्यालय में जाकर भोजन के पूर्व बालासाहब को देता था। वह बालासाहब ग्रहण करते। दो–तीन दिन वह स्वयंसेवक देरी से पहुँचा। किन्तु बालासाहब उसके आते तक भोजन के लिये रुके रहे। गत दो–तीन वर्षों से उनके चलने फिरने पर कुछ निर्बंध आये हैं। इसलिये उनके जन्मदिवस पर श्री गोविंदराव आर्वीकर और उनके सहकारी कार्यालय में जाकर वैदिक मंत्रों से बालासाहब का अभीष्टचिंतन करते हैं। बालासाहब उनको प्रणाम कर स्वागत करते हैं।

आपातकालीन स्थिति का विरोध

सरसंघचालक स्वीकारने के पश्चात् श्री बालासाहब ने संघकार्य की सर्वांगीण वृद्धि, प्रसार तथा सार्वत्रिक प्रभाव निर्माण करने पर ध्यान केंद्रित किया। दैनंदिन शाखा अधिक निर्दोष तथा सक्षम बनाए रखने पर कार्यकर्ताओं का ध्यान केंद्रित किया। दृतगति से प्रगति करने के लिये योजनाएं बनने लगी। वे क्रमशः कार्यान्वित होने लगी और आपातकालीन स्थिति घोषित हुई निराशा के अंधःकार से बाहर निकलकर और भीतिग्रस्त वायुमण्डल पर विजय पाकर, समाज को आपात्काल के विरुद्ध खड़ा कर प्रखर संघर्ष कर, श्रीमती इंदिरा गांधी की अजेय समझी जानेवाली शक्ति को निष्प्रभ बनाने में संघ का 15 प्रतिशत श्रेय था, यह इतिहास सर्वज्ञात है।

आपात्काल में सभी स्तरों के कार्यकर्ताओं को कष्ट सहने पड़े थे। चुनाव घोषित होने पर राजकीय पक्षों के कार्यकर्ताओं की कारावास से मुक्तता हुई थी। किन्तु संघ के कार्यकर्ता को वैसे ही कारावास में बंद रखा था। कारावास से मुक्त कार्यकर्ताओं को बिदाई देते समय बालासाहब ने सतर्क किया था कि, "हम लोग यहां पर दीर्घकाल तक रहने की तैयारी से आये थे। किन्तु अब तुम मुक्त हो चुके हो, फिर भी आपको अपने व्यक्तिगत जीवन में प्रवेश नहीं करना चाहिए। हम कारावास में है ऐसा समझकर आगामी समय में अपना पूरा समय और शक्ति चुनाव के संघर्ष में लगाकर यश प्राप्त करने का निश्चय करिये"। इस आवाहन का परिणाम सर्वविदित ही है।

सही आकलन

1977 के प्रवास में बुद्धिजीवी, विचारवंत, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में कार्यरत समाज के प्रबुद्ध वर्ग की बैठकों में संघ को सत्तात्मक राजकरण में रूचि नहीं है यह विचार श्री बालासाहब प्रतिपादित करते थे। उस समय बहुसंख्यक जागृत नागरिक और विचारवंत, संघ को राजकीय क्षेत्र में

पर्दापण कर वह क्षेत्र भी परिष्कृत करना चाहिये और जनकल्याण की दृष्टि से असको विधायक मोड़ देना चाहिये ऐसे विचार आग्रहपूर्वक रखते थे।

21 फरवरी 1983 को श्री बालासाहब हवाई जहाज से बम्बई जा रहे थे। उसी जहाज से रामकृष्ण मिशन के दिल्ली के निवासी स्वामी रंगनाथन् बम्बई जाने के लिये हवाई अड्डे पर आये थे। स्वामी रंगनाथन् तत्त्वज्ञान के अभ्यासक, प्रवाचक और प्रभावी वक्ता थे। किन्तु हिन्दू शब्द से उनको बहुत चिढ़ थी। उनके साथ नागपुर के रामकृष्ण आश्रम के आदरणीय स्वामी व्योमरूपानंद भी थे। उन्होंने स्वामी रंगनाथानंद जी को बालासाहब से परिचय कराने पर स्वामी श्री रंगनाथानंद जी ने कहा, "बालासाहब, आप हिन्दुओं के बहुसंख्या की अपरिहार्यता का जो विचार रखते हैं उससे मैं पूर्णतः सहमत हूँ। आप अपना कार्य ऐसा ही चलने दीजिये" उनकी बातों से, उसी समय जनता पक्ष के एक सचिव तथा सांसद श्री शहाबुद्दीन के इलेस्ट्रेटेड वीकली में प्रकाशित लेख के कारण वे प्रक्षुब्ध थे, यह स्पष्ट हुआ। योगायोग से महाराष्ट्र के प्रतिभासंपन्न विद्वान तथा राष्ट्रवादी पुरोगामी विचारक स्व. तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री जोशी बम्बई जाने के लिये हवाई अड्डे पर आये थे। वे श्री बालासाहब को जानते नहीं थे। किन्तु उनके पास बैठे स्वामी रंगनाथानंदजी को देखकर उन्होंने पूछताछ की। वे बालासाहब देवरस है ऐसा जानने पर वे पास आये। स्वामीजी की बातचीत समाप्त होने पर वे सामने आये। और "मैं लक्ष्मणशास्त्री जोशी" ऐसा अपना परिचय दिया। उस पर "मैं आपको पहचानता हूँ ऐसा बालासाहब ने कहा। उसके बाद तर्कतीर्थ ने कहां "अपके भाषण के (हिन्दू बहुसंख्यक की अपरिहार्यता) सभी मुद्दों से मैं सहमत हूँ। आप कहते हैं वह शत प्रतिशत सत्य है। आप इन्हीं विचारों का सातत्य प्रचार करते रहें यही आपसे आग्रह है।" श्री स्वामीजी या तर्कतीर्थ को संघ का प्रेम था ऐसी बात नहीं। किन्तु बालासाहब द्वारा किया हुवा देश की गंभीर समस्याओं से ग्रस्त परिस्थिति का सही आकलन और पूर्वग्रहविरहित विश्लेषण और मूल्यांकन से प्रभावित होकर वे अपने अन्तःकरण के स्वाभाविक विचारों को शब्दों में प्रकट करने से स्वयं को रोक नहीं सके।

कुछ महत्व के निर्णय

जून 1975 में घोषित आपात्कालीन स्थिति हट कर जनता पक्ष का शासन शुरू होने के दो वर्षों के कालखण्ड में बालासाहब ने अनेक महत्वपूर्ण निर्णय लिये। उनके सुयोग्य तथा दूरदृष्टि से निर्णय लेने की और निर्णयों के अनुसार सब स्वयंसेवकों का व्यवहार हो इसलिये प्रेरणा देना इन बातों में उनकी अद्‌भूत क्षमता का परिचय मिलता है।

आपात्काल घोषित होने के 2–3 माह बाद बालासाहब ने कारावास से तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को पत्र लिखा था। उसमें आपात्काल की निरर्थकता, संघपर प्रतिबंध लगाने का अविचार आदि बातों का उल्लेख कर व्यापक राष्ट्रीय हित की दृष्टि से आपातकाल हटाकर संघ पर लगा प्रतिबंध हटाना और

सर्व जनता की शक्ति राष्ट्रविकास कार्य में लगाने पर इन प्रयत्नों में संघ सहकार्य देगा आवाहन किया था। उस समय जनसंघ के अलावा अन्य कांग्रेस विरोधी पक्षों ने संघ पर शरणागति स्वीकारने का आरोप लगाया। किन्तु संघ जैसे राष्ट्रनिर्माण में लगी संघटनों के प्रमुखों को सर्व समावेशक दृष्टिकोण अपनाना पड़ता है। पक्षीय तथा संस्थागत हितों की अपेक्षा राष्ट्रहित को प्रधान्य देना पड़ता है। स्वकीय शासन के खिलाफ लगातार संघर्ष करना या छोटे–बड़े आन्दोलन करना लाभदायक नहीं होता है। इसमें देश का नुकशान होता है। नियत कार्य से ध्यान हटता है। अतः संघर्ष का निर्णय लेने के पूर्व पूर्ण विचार करना पड़ता है। सभी पर्यायों का विचार किया गया है इसका जनता को विश्वास होना चाहिए। यह सब ध्यान रखकर इंदिरा जी को पत्र भेजने का निर्णय लिया गया था।

उसमें दूरदृष्टि थी। आपात्काल के विरुद्ध तीन स्तरों पर सत्याग्रह किया गया। यह संघर्ष लोकसंघर्ष समिति के नेतृत्व में हुआ। पहला केवल 15 जुलाई 75 से 17 अगस्त 1975 तक सांकेतिक रूप में हुआ। 14 नवम्बर 1975 से 26 जनवरी 1976 देशव्यापी तथा विशाल था। यह सत्याग्रह केवल संघ पर का प्रतिबंध हटाने के लिये न होकर लोकतांत्रिक मूल्यों को पुनर्स्थापित करने के लिये सर्वसमावेशक लोकसंघर्ष समिति के तत्त्वावधान में होना चाहिये यह निर्णय लिया गया। परिणामतः Charter of demands में संघ पर का प्रतिबंध हटाने की बात का उल्लेख नहीं था। संस्थागत हित की अपेक्षा राष्ट्रहित को प्रधानता देने का संस्कार स्वयंसेवकों के मनों पर होने के कारण इस निर्णय के अनुसार सब व्यवहार हुआ। (यह निर्णय भी श्री बालासाहब की सूचना के अनुसार ही हुआ था।)

श्रीमती गांधी को पत्र भेजने की दूरदृष्टि का महत्त्व भी बाद में ध्यान में आया। चुनाव की घोषणा हुई। जनता पक्ष स्थापित हुआ। स्थापना के बाद अल्पकाल में ही जनता पक्ष की चुनाव व्यवस्था देश में सब दूर खड़ी हुई।

परिस्थिति की गंभीरता ध्यान में लेकर श्रीमती गांधी ने एक कुटिल दांव खेलने का प्रयत्न किया। प्रधानमंत्री कार्यालय में से एक विश्वस्त जिम्मेदार और चर्चा करने में कुशल शासकीय सचिव को संघ की भूमिगत नेताओं से मिलने को भेजा गया। यह भी भेंट दिल्ली में हुई संघ की ओर से लाला हंसराज गुप्ता, श्री बापूवराव मोघे और श्री ब्रह्मदेव जी उपस्थित थे। उस सचिव ने श्रीमती गांधी का सुझाव सामने रखा। "संघ के लगभग सभी स्वयंसेवकों को बंदी बनाया है। राजकीय पक्षों के कार्यकर्ता मुक्त हुए हो तो भी संघ के स्वयंसेवकों को छोड़ने का शासन का विचार नहीं है। बाहर रहे हुए उनके परिवार जनों के सामने अनेक जटिल प्रश्न खड़े हैं। उनकी आर्थिक अवस्था दयनीय है। जनता भी खिलाफ है। अतः बाहर के परिवार जनों तथा कारावास भुगत रहे स्वयंसेवकों का दम उखड़ गया है। कांग्रेस चुनाव जीतेगी ही। उसके पश्चात् संघ के नेता और स्वयंसेवक कारागारों में पड़े रहेंगे। सब भूमिगत नेताओं को भी पकड़ कर कारागृह में ठूंस दिया जाएगा। इस संभाव्य भीषण आपत्ति से बाहर निकलने का एक ही मार्ग है। संघ को जनता पक्ष से

संबंध विच्छेद कर चुनाव प्रक्रिया से हट जाना चाहिए। ऐसा आश्वासन संघ के अधिकारियों ने दिया तो कारावास में रखे सब नेता और कार्यकर्ताओं को छोड़ दिया जायेगा। और चुनाव के बाद संघ पर से प्रतिबंध हटाना संभव होगा।" श्रीमती गांधी के अनुभवों के अनुसार संघ का नेतृत्व उनको अपरिपक्व, देश काल परिस्थिति का ज्ञान न रखनेवाला, कच्चा तथा जनमानस में स्थान न रखनेवाला लगता था। परंतु भूमिगत नेताओं ने श्रीमती गांधी को उस सचिव के हाथों जबाब भेजा कि "आपातकाल के बाद तुरन्त ही बालासाहब ने पत्र भेजकर सहकार्य का हाथ बढ़ाया था। उस समय आपने ध्यान नहीं दिया। अब समय निकल गया है। अब सब बातों का निर्णय चुनाव की लड़ाई में ही लगेगा।" संघ के इस निर्णय से देश के इतिहास में कितना महत्त्व का मोड़ मिला यह सर्व ज्ञात है।

1977 के चुनाव में इंदिरा गांधी का प्रचण्ड पराभव करने में और जनता पक्ष को सताधिष्ठित कराने में संघ को प्राप्त यश से संघ के स्वयंसेवकों को भी आनन्द हुआ था। कृतार्थ की भावना भी उनके मन में उदित हुई थी। किन्तु सबको इस उल्लास में से बाहर लाकर संघ के नित्य कार्य की तथा नई परिस्थिति में संभाव्य दायित्व की कल्पना दिखाई गयी। जनता पक्ष का शासन दृढ़मूल बनाना और लोगों की अपेक्षाएं पूर्ण हो यह स्वयंसेवकों पर जिम्मेदारी आ पड़ी। स्वयंसेवकों के भावविश्व को संभाल कर विशिष्ट दिशा में कार्य को प्रवृत्त करना यह बहुत कठिन काम था। कुछ पहलुओं का विश्लेषण करने से दुर्धर अड़चनों की कल्पना आती है।

1977 के पूर्व के चुनावों में मुसलमनों ने अपने गट्ठा मतों को कॉंग्रेस को देकर उसको विजयी बनाया था। किन्तु 1977 में विशेष कारणों से इन मतों का बड़ा हिस्सा जनता पक्ष को मिला। ये सारे मत हमेशा अपने को मिलते रहें इस दृष्टि से जनता पक्ष के मुखियों में मुस्लिम तोषण की स्पर्धा शुरू हुई। मुसलमान तो संघ पर नाराज ही थे। किन्तु संघ का मजबूत आधार छोड़ना नेताओं को संभव नहीं था। अतः इससे मुक्ति पाने के लिये संघ अब बदल गया है। ऐसा वे मुसलमानों को समझाने लगे। संघ बदल गया है इसबात पर विश्वास हो इसलिये संघ को, संघ में अहिन्दुओं को प्रवेश देना चाहिए, हिन्दुत्व की संकल्पना छोड़ दें, ध्वज बदल दें, संघ के अधिकारी चुनाव प्रक्रिया द्वारा नियुक्त हों आदि अनाहूत सूचनाएं दी जाने लगी। संघ से सहानुभूति रखनेवाले कुछ प्रमुख नेताओं ने भी एकसी सूचनाएं भेजी थी। समाचार पत्रों में भी उसी प्रकार के लेख प्रकाशित हुए थे। इस परिस्थिति का खुला प्रतिवाद न करते हुए अपना कार्य पूर्ववत् चालू रखने का निर्णय श्री बालासाहब ने लिया। स्वयंसेवकों को भी वह निर्णय विचित्र सा लगा। किंतु सब स्वयंसेवकों को प्रगट प्रतिवाद न करने के कारण, बालासाहब ने समझा दिये।

समाजवादियों का प्रयास

श्री मधु लिमये तथा राजनारायण जैसे बुद्धिमान समाजवादी नेताओं को संघ के शक्ति की कल्पना थी। जनसंघ के माध्यम से स्वयंसेवक पक्ष में या शासन यंत्रणा में रहे तो उनके प्रभाव के कारण, अपना वाचाल नेतृत्व धीरे–धीरे समाप्त होगा यह बात वे समझते थे। संघ में परिवर्तन की सूचनाओं का विरोध न करते हुए, न बोलते हुए भी संघ के अधिकारियों ने नजरअन्दाज की, वैसे वे अस्वस्थ हुए। दुहरी सदस्यत्व की बात उन्होंने खड़ी की। केन्द्रीय मंत्रीमंडल में जनसंघ को उनकी ताकत की तुलना में बहुत कम स्थान दिये गये थे। केवल दो केबिनेट मंत्री थे। विभागों के बंटवारे में परराष्ट्र विभाग को छोड़ कर अन्य महत्त्व के विभाग जनसंघ के अतिरिक्त अन्य पक्षों में बांटे गये। व्यापक जनहित का ध्यान रखते हुए जनसंघ के मंत्रियों ने आपत्ति नहीं उठायी। यह अवहेलना स्वीकारने के कारण वे भी अपने जैसे ही सत्ता को चिपके रहने वाले लोग है ऐसा समझकर उन दिखावटी नेताओं ने दुहरे सदस्यत्व का प्रश्न खड़ा कर जनसंघ के सदस्यों को रा. स्व. संघ में अधिकार के पद स्वीकरना नहीं चाहिये, संघ का प्रचार वे न करें, हिन्दुत्व की संकल्पना का त्याग करें इतना ही नहीं, तो उनका संघ का सदस्यत्व छोड़ना चाहिए, वे शाखा से संबंध न रखें, व्यक्तिगत भेटगांठ, अनौपचारिक बैठकें, संघ के नैमित्तिक और सार्वजनिक कार्यक्रमों में सहभागी नहीं होना चाहिये इस प्रकार की मांगे बढ़ाना चालू किया। जनसंघ के कार्यकर्ताओं का प्ररेणास्तोत संघ ही होने के कारण संघ के अधिकारियों को अपने भाषणों में हिन्दुत्व के विचारों का प्रतिपादन नहीं करना चाहिए ऐसा भी वे कहने लगे। इन मूर्खतापूर्ण मांगों को देश के तथाकथित पुरोगामी विचारक, लब्धप्रतिष्ठित पत्रकारों ने भी स्वीकार किया। जनसंघ के नेताओं को इन मूर्खतापूर्ण मांगों की निरर्थक तथा अव्यवहारिकता का ज्ञान होते हुए भी वे कुछ नहीं कर पा रहे थे। जनसंघ को एक भी मांग मंजूर नहीं थी। राजकीय पक्ष के पदाधिकारी संघ में अधिकारी होते ही नहीं इसलिये पदाधिकारी न बने की मांग पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया। किन्तु अपमानास्पद मांगे कैसी स्वीकारी जा सकती थी? जनसंघ के लोग मांगे स्वीकार नहीं करेंगे और मंत्रीमंडल से वे बाहर हो जाने से चाहे वैसी मनमानी करना उन्हें संभव होगा ऐसा उन नेताओं का ख्याल था। जनता पक्ष में के अन्य नेताओं को इसकी कल्पना थी। संघ के अधिकारियों से खुले दिल से बातचीत कर कुछ समय कष्ट सहने के लिये जनसंघ के नेताओं को कहने की विनंती करना तय हुआ। उसके अनुसार दिल्ली स्थित सरकार्यवाह और अन्य अधिकारियों से मिलकर आग्रह किया गया। इस विषय में प्रत्यक्ष श्री बालासाहब से बातचीत करने का दायित्व श्री चंद्रशेखर पर सौंपा गया। वे किसी काम से रात को हवाई जहाज से मद्रास जा रहे थे। वह विमान नागपुर में रुकता था। उस समय उनकी बालासाहब को मिलने की इच्छानुसार बालासाहब हवाई अड्डे पर पहुँचे और वहां के अतिविशिष्ट व्यक्तियों के कक्ष में दोनों नेताओं की चर्चा हुई अन्य कोई व्यक्ति चर्चा के समय उपस्थित नहीं था। अतः चर्चा क्या हुई यह मालूम नहीं हुआ। किन्तु बाद में साल डेढ़ साल तक अवलम्बित नीति से चर्चा के स्वरूप की कल्पना की जा सकती है। अनौपचारिक वार्तालाप से कुछ बातें ध्यान में आयीं। 1) संघ की भूमिका में बिल्कुल परिवर्तन नहीं होगा। 2) राष्ट्रहित रक्षा का संघ एक जागृत प्रहरी होने के नाते किसी भी पक्ष, व्यक्ति, गुट या वर्ग की राष्ट्रविरोधी कृतियों को संघ चलने नहीं देगा। 3) संघ के अधिकारियों को छोड़कर अन्य साधारण स्वयंसेवकों को उनकी

प्रवृत्ति के अनुसार किसी भी पक्ष के या संस्था के कार्य में सहभागी होने का स्वातंत्र्य रहेगा। उस पर बंधन की आवश्यकता नहीं होगी। 4) जनसंघ के कार्यकर्ताओं को पक्षीय अनुशासन के अनुसयार कार्य करना चाहिये। उसके विषय में निर्णय वे स्वयं करेंगे। संघ उसमें दखल नहीं देगा। किन्तु 'स्वयंसेवकत्व' स्थायी और अभंग होने के नाते, उनको शाखा में न जाना, स्वयंसेवकों का अपरिहार्य कार्यों में सहभागी न होना, या नागरिक होने के नाते संघ के सार्वजनिक कार्यक्रमों में भाग न लेना, ऐसा उनसे संघ कदापि नहीं कहेगा यह बात स्पष्ट की।

कुछ समय तक विशिष्ट पथ्यपालन करना निश्चित हुआ। कारण जनता मंत्रीमंडल के 50 प्रतिशत मंत्री, घमंडी, व्यवहारशून्य, झगड़ालू, विधायक कार्यों का तनिक भी ज्ञान न रखनेवाले, संघद्वेष से अंधे बने हुए राष्ट्रहित की चिंता न करते हुए केवल स्वयं के श्रेष्ठत्व के अहंगड़ की रक्षा करने व्यस्त, जीवन भर तोड़फोड़ में रस रखनेवाले होने के कारण जनता पक्ष विषय में उन में आस्था नहीं थी। जनता पक्ष तोड़ने के लिए उनको छोटा सा कारण भी पर्याप्त लगता वैसा होता तो विरोधी पक्ष देश का शासन नहीं चला सकते ऐसी सर्वधारण समाज की धारणा बनती। दुहरे सदस्यत्व के आग्रह के कारण जनता पक्ष टूटता तो उस समय होती रही घटनाओं की बारिकियां ध्यान में आने के कारण, उसकी जिम्मेदारी जनसंघ पर और पर्याय में संघ पर थोपी जाती। अन्य पक्षों को जनता पक्ष टूटने से कोई चिंता नहीं होती। किन्तु संघ के स्वयंसेवक ऐसा विचार कर नहीं सकते थे। अतः सभी ने कुछ तथ्यों का पालन करने का निर्णय लिया। 1) स्वयंसेवक होने के नाते आवश्यक तथा अपरिहार्य कर्तव्यों को छोड़कर अन्य समय संघ से विशेष संबंध न रखना। 2) हिन्दुत्व को संकल्पना की निमित्त बनाकर जनसंघ के लोगों पर आक्रमण किया जाता रहा। जनसंघ के लोग प्रकट रूप से इन संकल्पों का प्रचार और प्रसार करनेवाले न होने पर भी संघ के प्रसृत किये हुए विचार जनसंघ का अवसर न मिले इसलिये संघ के वरिष्ठ अधिरियों ने अपने सार्वजनिक भाषणों में तथा वक्तव्यों में हिन्दूत्व के संकल्पनाओं का थोड़ा सा उल्लेख मात्र करते हुए शाखा, सेवाकार्य, संघटना को मजबूत बांधना, इन विषयों पर अधिक बल देना निश्चित हुआ। 1।। वर्ष यह पथ्यपालन नियमपूर्वक किया गया।

पथ्यपालन के परिणाम

इस पथ्यपालन के कारण जनता व साधारण कार्यकर्ता और स्व्यंसेवकों में भ्रम निर्माण हुआ। प. पू. बालासाहब शिविरों के बौद्धिक वर्गों में भी इन पथ्यों का ध्यान से पालन करते थे। हिन्दुत्व की व्यापकता परिधि में अहिन्दू भी आ सकते हैं। शाखा के सब नियमों का ठीक से पालन की तैयारी रहने परउनको भी शाखा में प्रवेश दिया जा सकेगा। यह खूले रूप से बोला जाता था। इससे अनेक पुराने कार्यकर्ता नाराज हुए। हिन्दू, हिन्दूत्व और हिन्दू राष्ट्र का उल्लेख भाषणों में कम होने के कारण संघ ने अपनी भूमिका का त्याग तो नहीं किया ऐसे संदेह लोगों में जगने लगे। यह भूमिका संघ मूल विचारों के विपरीत और संघ की

मूल प्रकृति में परिवर्तन लानेवाली है ऐसा लगने के कारण महाराष्ट्र प्रांतसंघचालक स्व. श्री काका लिमये ने बालासाहब को पत्र लिखकर सतर्क किया था कि, "आपको डा. हेडगेवार के संघ का प्रमुख पद दिया गया है। आप वह संघ चलायें और बढ़ायें। उस संघ में बदल करने का प्रयास न करें। आप को बदल आवश्यक ही लगता हो तो आप नये संघ की स्थापना करें। डाक्टरजी को केवल हिन्दुओं का संघ हमारे लिए छोड़ दें। आप संघ में परिवर्तन करेंगे तो वह डाक्टरजी का संघ नहीं होगा। और ऐसे संघ से मैं संबंध नहीं रख सकूंगा।" श्री काका के इस पत्र में बहुतोश एकनिष्ठ कार्यकर्ताओं के मन में उत्पन्न संभ्रम और उद्वेग का प्रतिबिंब दिखाई देता है। उसी वर्ष तरुण स्वयंसेवकों के शिविर के समारोप का बालासाहब का भाषण सुनकर उनसे विशिष्ट संबंध रखनेवाले इतवारी शाखा के एक पुराने स्वयंसेवक ने भी नाराजी प्रकट की थी। कार्यकारी मंडल की बैठक में भी कुछ ज्येष्ठ अधिकारियों ने नाराजी प्रकट की। उस समय सरकार्यवाह श्री रज्जूभैया ने "हम लोगों ने अपनी सैद्धांतिक भूमिका में कोई परिवर्तन नहीं किया है। तथा अपनी कार्यपद्धति में व्यवहार की निश्चित पद्धति में कोई परिवर्तन नहीं किया। व्यापक राष्ट्रहित के लिये कुछ समय तक धीरज रखो, शीघ्र ही सब स्पष्ट होगा।" ऐसा बताया। बालासाहब इस विषय में कुछ बोले नहीं, इसका अर्थ लोगों के ध्यान में आया।' "Those who stamd ad wait also serve" इस काव्य पंक्ति का कुछ ही दिनों में अनुभव मिला। सदैव राजकरण से दूर रहनेवाले और राजकीय चालों से अनभिज्ञ समझे जानेवाले लोगों ने जीवन भर राजकरण के दांवपेच करते रहनेवाले साम्यवादी नेताओं पर मात कर दी, यह लोगों को दिखा। अपने सब दांवपेच व्यर्थ हुए जनसंघ को जनता पक्ष अलग करने में असफल रहे यह ध्यान में आने पर ये सब नेता क्रोधित हुए और दुहरी सदस्यता का प्रश्न पुनः उठाकर जनता पक्ष भंग किया। जनता शासन समाप्त हुआ। किन्तु उसके लिये बहुतांश विचारवंतों ने जनसंघ को उत्तरदायी नहीं ठहराया। अपितु जनसंघेतर अन्य विरोधी पक्षों के कुटील कार्यकलापों से जनता को घृणा हुई जनसंघ भाजपा में परिवर्तित हुआ। कुछ समय बुद्धिपुरस्पर पालन किया हुआ पथ्यपालन हटा और सब वायुमंडल मुक्त, निरोगी और प्रोरणादायी बना।

जनता पक्ष फूट कर सत्ताभ्रष्ट हुआ इसका श्रेय श्रीमती गांधी की कुटील राजनीति पटुता के अलावा जनता पक्ष में जनसंघोतर पक्षों के अक्षम और झगड़ालू नेताओं को है। जनसंघ के मंत्रियों का कारोबार अत्युत्कृष्ट होने के बावजूद, जनता पक्ष में कीचड़ उछल कर जनसंघ पर भी लगा। जनसंघ भाजप में रूपांतरित हुआ तो भी पक्ष की लोकप्रियता घटने लगी। भाजप के लोकसभा और विधानसभा सदस्यों की संख्या घटी। इससे भजप में वैचारिक संघर्ष शुरू हुआ। भाजप को हिन्दुत्व पर आस्था है यह प्रतिमा धूमिल हुई और गांधीय समाजवाद की घोषणा हुई। इससे भजप के बहुसंख्य कार्यकर्ता और संघ के स्वयंसेवकों में हलचल मची। संघ की बैठकों में भी स्वयंसेवकों की नाराजी प्रकट होने लगी। भजप को काबू में रखना चाहिये; उसकी व्यवस्था करिये ऐसा सूचना संघ में तथा बाहर के विचारवंतों से श्री बालासाहब तक पहुँचाये जाने लगी। बालासाहब ने इस परिस्थिति को कुशलतापूर्वक हथिया कर उस पर काबू पाया। संघ के बाहर

के प्रमुख लोगों को, भाजप स्वतंत्र पक्ष है और अपनी नीति तय करने का उनको अधिकार है। संघ को उनमें हस्तक्षेप करने का कारण नहीं ऐसा लिखा गया। "अटलजी और आडवाणी जी जैसे भाजप के अनेक नेता संघ के निष्ठावान स्वयंसेवक हैं। राजकरण का कई वर्षों का उनका अनुभव है। राजकरण जटिल है। परिस्थिति का पूर्ण अभ्यास करके ही उन्होंने निर्णय लिया होगा, प्रत्येक बात का स्पष्टीकरण देना हितावह नहीं होता तथा उनके निर्णय पर खूले आम चर्चा करना लाभदायक नहीं होगा, अपितु हानि हो सकती है। संघ की शक्ति बढ़ाने का प्रयास करो। संघ के पास अनुग्रह करने का सामर्थ्य है। किन्तु वह निग्रह करने लायक पर्याप्त नहीं हैं। वह सामर्थ्य प्राप्त करने पर जनसंघ को ही क्यों अन्य पक्षों को भी संघ दिशादर्शन कर सकेगा। भाजप के लिये हुये निर्णयों के परिणामों का उनको ही मुकाबला करना होगा। अतः कुछ समय तक wait and watch की नीति रखनी होगी" इस प्रकार का मार्गदर्शन संघ के स्वयंसेवकों को श्री बालासाहब ने किया।

गांधीय समाजवाद को स्वीकारने से भाजप को अपेक्षित फल नहीं मिला। भाजप भी अन्य राजकीय पक्षों जैसा ही है ऐसा माना गया। जनमानस में की वैशिष्ठयपूर्ण पृथक प्रतिमा धूमिल हुई। उसका परिणाम अलगे चुनाव में स्पष्ट हुआ। 1984 में भाजप के दो ही लोकसभा सदस्य चुन कर आये। श्री अटलबिहारी जैसे नेता भी चुनाव हार गये। इस हार के कारण भाजपा के प्रमुख नेताओं में पुनः विचार मंथन शुरू हुआ। इस पूर्ण कालखंड में भाजप के प्रमुख नेताओं से श्री बालासाहब की भेंट होती रहती थी। विविध प्रान्तों के संघ के और भाजप कार्यकर्ताओं का संवाद भी होता था। संघ के नेताओं ने भाजप नेताओं को अकारण कोई आग्रह किया नहीं। उन को ही अपनी नीतियों के दोष और त्रुटियां ध्यान में आने से, दृष्टि और विचार स्पष्ट हुए। भाजपा को अपने दृढ़ वैचारिक अधिष्ठान का पुनः प्रत्यय आया। और भाजपा प्रगति के मार्ग पर अग्रसर होने लगा। बालासाहब के प्रगल्भ अनुभव, समृद्ध सुयोग्य मार्गदर्शन का मूल्य सबके ध्यान में आया।

समरसता का विचार

प्रारम्भ से ही श्री बालासाहब दैनंदिन शाखा के स्वरूप के विषय में उनकी कल्पना सामने रखते थे। शाखा याने नियमित प्रतिदिन चलनेवाली जिसमें तरुण और बालों की भरपूर संख्या होगी और जिसमें संस्कार देनेवाले विविध कार्यक्रम नियमित रहेंगे ऐसी, इस आग्रह के साथ विविध सामाजिक समस्याओं के प्रति स्वयंसेवक नित्य जागृत रह कर उन समस्याओं का हल निकालने में सक्रिय रहें ऐसा ही उनका आग्रह रहता था। गत 10–15 वर्षों से दलित समस्या गंभीर रूप लिया है। अन्य पक्ष इस प्रश्न का चुनाव की दृष्टि से विचार करते हैं। 'मतपेटी' का विचार प्रमुखता से होता है। अतःसमाज के विविध गुटों में का तथा वर्गों में का परस्पर सहकार्य और सामंजस्य लुप्त होता जा रहा है और पृथकवादी प्रवृत्ति बढ़ रही है। जातियों के आधार पर बने गुटों में संघर्ष होते हैं। विशेषतः उत्तर भारत में इसकी तीव्रता का अनुभव मिलता है। इस समस्या पर विजय प्राप्त कर सामाजिक समरसता की योजनाओं को प्रधानता देने के विषय में स्वयंसेवकों से

आग्रह किया जाता है। महाराष्ट्र में "सामाजिक समरसता मंच" की स्थापना होने से प्रयतनों को दिशा प्राप्त हो रही है। इस मंच को श्री बालासाहब का मागदर्शन सदैव प्राप्त होता है। महाराष्ट्र में इस समरसता मंच को प्रतिष्ठा प्राप्त है। अन्य प्रान्तों में उसका प्रारम्भ हुआ है और कार्य प्रगतिपर है।

दि. 7 मई 1974 में बालासाहब के पूना की वसंत व्याख्यानमाला में हुए भाषण में उन्होंने वर्णव्यवस्था और अस्पृश्यता इन प्रश्नों के संबंध में अपने विचार अत्यंत स्पष्ट और तीव्र भाषा में स्पष्ट किये। उन्होंने कहा था "छुआछूत पूर्णतः गलत है। It must go Lock, stock & barrel वह पूर्णतः नष्ट होनी चाहिए।" उस वर्ष तृतीय वर्ष शिक्षित स्वयंसेवकों के माध्यम से बालासाहब के विचार अधिकाधिक स्वयंसेवक और सामाजिक गुटों तक पहुँचे।

अ. भा. प्रतिनिधि सभा की एक बैठक में आरक्षण के विषय में एक प्रस्ताव रखा गया था। उस समय का श्री बालासाहब का मार्गदर्शन महत्त्पूर्ण है। उन्होंने कहा कि, "दलित नेताओं की भाषा आक्षेपार्ह यह सही है किन्तु हम लोग यदि दलित समाज के सदस्य होते, अनेक शतकों तक सामाजिक अत्याचार, विषमता, अन्याय, असहनीय वेदना, दुःख अपमान आदि हमको सहना पड़ता तो हम किस भाषा में बोलते इस पर विचार प्रस्ताव सर्वमत से पारित हुआ। उनके नेतृत्व का एक अलग–सा दर्शन है। सामाजिक समरसता लाने के लिये केवल चर्चा या प्रस्ताव पारित करना पर्याप्त नहीं है। इस अनुभव के कारण संघ ने दलित बस्तियों में सम्पर्क करना, साधु संतों को वहां ले जाना, सेवा प्रकल्प आदि कार्य प्रारम्भ किए थे। श्री बालासाहब ने उस कार्य को गति प्रदान की। 1981 में प. पू. डॉक्टर जी के इस शताब्दी समारोह के निमित्त संपन्न कार्यक्रमों में सेवाकार्य बढ़ाने पर बहुत बल दिया गया। परिणामस्वरूप आज विविध दलित बस्तियों में चलाये जानेवले सेवा प्रकल्पों की संख्या 5000 से भी अधिक हैं। सम्पर्क और सेवा के माध्यम से ही समरसता निर्माण होगी ऐसी श्री बालासाहब की मान्यता है।

श्री गुरुजी और श्री बालासाहब

पू. श्री गुरुजी और बालासाहब के परस्पर संबंधों के विषय में अनके लोगों में कुतुहल है। श्री बालासाहब 1953 से 1960 तक प्रत्यक्ष शाखाकार्य के दायित्व से मुक्त थे। किन्तु उसकी पूर्वपीठिका ध्यान में लेना उपयुक्त होगा। 1969 में संघ पर प्रतिबंध हटने के बाद सर्व कार्यकर्ताओं में संघ का विचार, कार्यपद्धति और नेतृत्व की दिशा इस संदर्भ में विचार मंथन हुआ। अनेक प्रमुखों की राजकीय कार्य को प्रधानता देने की इच्छा थी। दीर्घ विचारमंथन के पश्चात् दैनंदिन शाखाकार्य को ही महत्व देना निश्चित हुआ। साथ ही राजकीय, श्रमिक, विद्यार्थी, समाचार पत्र तथा वनवासी क्षेत्र में स्वयंसेवकों को प्रवेश करना चाहिए यह निर्णय हुआ। प्रत्येक क्षेत्र का दायित्व एक प्रमुख कार्यकर्ता पर देना भी तय हुआ। राजकीय क्षेत्र पं. दीनदयाल उपाध्याय, श्रमिक और विद्यार्थी क्षेत्र श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी, वनवासी क्षेत्र श्री बालासाहब देशपांडे जैसे

कर्तृत्वसंपन्न और उपक्रमशील कार्यकर्ताओं को सौंपे गये। श्री बालासाहब देवरस को समाचारपत्रों का क्षेत्र दिया गया। श्री भैय्याजी दाणी और एकनाथ जी रानडे ने प्रत्यक्ष संघ कार्य की जिम्मेदारी उठायी। सब लोग श्रीगुरुजी से विचार विमर्श करते थे। सब क्षेत्र स्वावलंबी हों, और आधुनिक परिस्थिति के अनुसार उनकी कार्यपद्धति और कार्य की दिशा हो इसपर श्री गुरुजी का विशेष आग्रह रहता था। इन सब क्षेत्रों के प्रमुख प्रत्यक्ष शाखाकार्य में नहीं थे। राजकीय क्षेत्र में भी बालासाहब का मार्गदर्शन होता था। 1960 तक सभी कार्य स्वावलंबी हुए। संघकार्य का क्षेत्र विस्तृत हुआ। श्री बालासाहब को पुनः प्रत्यक्ष संघकार्य में आना चाहिये ऐसा कई कार्यकर्ताओं ने सुझाया। उनके राजकीय क्षेत्र के सुयोग्य मार्गदर्शन की क्षमता देखकर उनको जनसंघ का नेतृत्व स्वीकार करना चाहिए ऐसा भी आग्रह किया गया। "श्री गुरुजी कहेंगे वैसा मैं करूँगा", यह उनका स्पष्ट उत्तर था। उस समय डा. आबाजी थत्ते ने श्री बालासाहब को संघकार्य का दायित्व उठाना चाहिये। ऐसी श्री गुरुजी की इच्छा होने की सूचना दी। उस वर्ष तरुण स्वयंसेवकों के शिविर में बालासाहब थे। उसके पूर्व तरुण स्वयंसेवकों के शिविर में पूर्ण समय श्री गुरुजी उपस्थित रहते थे। तीनों दिन उनके बौद्धिक वर्ग होते थे। परंतु इस वर्ष श्री गुरुजी प्रवास में होने से, श्री बालासाहब के तीनों दिन भाषण हुए। तीसरे भाषण की समाप्ति पर एक ज्येष्ठ अधिकारी के उस्फूर्त उद्‌गार लक्षणीय थे। उन्होंने कहा "यह भाषण तो गुरुजी का ही है।"

श्री गुरुजी बालासाहब को पू. डाक्टरजी की प्रतिमा मानते थे। अतः वे बालासाहब का वैसा ही सम्मान करते थे। श्री गुरुजी कई बार श्री भैय्याजी दाणी, बाबासाहब आपटे जैसे ज्येष्ठ कार्यकर्ताओं से भी विनोद करते थे; किन्तु बालासाहब को उन्होंने उस क्षेत्र में कभी नहीं खींचा। पुराने जमाने में ज्येष्ठ व्यक्तियों के समक्ष छोटे लोग विशिष्ट मर्यादाओं का पालन करते थे। श्री गुरुजी भी वैसा ही वर्ताव करते थे। बालासाहब स्वास्थ्य की सदैव चिंता करते थे। 1959 में बालासाहब विषमज्वर से बिमार थे। उनको कार्यालय में लाया गया। श्री गुरुजी का उनकी शुश्रुषा पर ध्यान रहता था। प्रवास में जाते समय प्रत्येक सप्ताह में बालासाहब के स्वास्थ्य की जानकारी देते रहने की सूचना उन्होंने दी थी। उनके अनुसार उनको जानकारी दी जाती रही। नागपुर लौटने पर कार्यालय में प्रथम बालासाहब के कमरे में जाकर आधा घण्टा उनके पास बैठकर स्वास्थ्य की विस्तृत पूछताछ करते थे।

पू. गुरुजी बालासाहब को स्वतः समकक्ष मानते थे। 1950 में बालासाहब सहकार्यवाह और भैयाजी दाणी सरकार्यवाह थे। केन्द्रीय मंत्रिमंडल के एक प्रमुख मंत्री को (शायद सरदार पटेल को ही) पत्र लिखना निश्चित हुआ। वह पत्र गुरुजी या भैयाजी दाणी के हस्ताक्षर से न भेजते हुए बालासाहब के हस्ताक्षर से भेजने का विचार भैय्याजी ने प्रस्तुत किया। बालासाहब को गुरुजी के कमरे में बुलाकर उन्होंने ही पत्र लिखना चाहिए ऐसा सुझाया। श्री बालासाहब ने मान्य कर लियो। किन्तु अपने हाथ से पत्र लिखने की उनकी अनिच्छा को देखकर पत्र भेजने में विलम्ब न हो इस विचार से उनको कमरे में ही रोक कर मुझे लेटरहेड लाने को कहा। श्री बालासाहब पत्र का मजकूर कहने लगे और मैं लिखता गया। पत्र पूर्ण होने पर

बालासाहब ने उसपर हस्ताक्षर किये और वे अपने कमरे में गये। परिपाटी के अनुसार पत्र को नोंद कर पत्रक्रमांक डालने से मुझे श्री गुरुजी ने रोका। पत्र की नोंद न करते हुए ही लिफाफे में बंद कर एक प्रमुख कार्यकर्ता के हाथों दिल्ली भेजा गया। सब लोग के उठ जाने पर "यह पत्र किसे और उसमें क्या लिखा है भूल जाओ" ऐसा उन्होंने गंभीर आवाज में कहा। मैं भी उसमें यशस्वी हुआ हूँ। उस पत्र के विषय में मुझे कुछ भी स्मरण नहीं है। श्री बालासाहब पुनः संघ में कार्यरत होने के बाद भी जनसंघ पर उनका ध्यान रहता था। श्री गुरुजी की इस बात के लिये संमति थी। जनसंघ के अधिवेशनों में भी वे उपस्थित रहते थे। जनसंघ में श्री बलराज मधोक और अन्य नेताओं में मतभेद बढ़े उस अधिवेशन में भी बालासाहब उपस्थित थे। नागपुर वापिस आनेपर सब घटनाओं की जानकारी उन्होंने श्री गुरुजी को दी थी। उस मतभेद के कारण श्री बलराजजी ने जनसंघ का त्याग किया। जनसंघ के संस्थापकों में से एक तथा जनसंघ के अध्यक्ष रहे हुए अपने जैसे वरिष्ठ नेता को जनसंघ के लगभग हकाल देने की हिम्मत अपने से कनिष्ठ नेताओं को हुई यह बात उनको बहुत चुभी थी। यह सब बालासाहब के प्रोत्साहन से ही हुआ ऐसी उनकी धारणा बनी हुई है। पू. गुरुजी के चरित्रलेखन के संदर्भ में मैं दिल्ली में बलराज जी से मिला था। घण्टा डेढ़ घंटा की बातचीत का अधिकतर समय वे बालासाहब के विषय में ही बोल रहे थे। बालासाहब के विषय में उनकी नाराजी प्रकट होती रही। भाजप की स्थापना पर उन्होंने जनसंघ नाम से नया पक्ष खड़ा किया। तथा डा. मुखर्जी और दीनदयाल जी की संकल्पना पर आधारित वह सही पक्ष है ऐसा प्रचार करना शुरू किया। श्री बालासाहब सरसंघचालक होने के बाद उन्हें मधोक जी ने 8–10 पत्र लिखे। उनके पुराने आरोप और आक्षेपों की पुनरावृत्ति ही होती रही। ऐसे प्रश्नों का हल पत्रों द्वारा नहीं हो सकेगा इसलिये आप मुझसे दिल्ली में मिलिये ऐसा सूचित करने के बाद भी वे दिल्ली में नहीं मिले और पत्रलेखन का सिलसिला कुछ समय तक उन्होंने चालू रखा। उन पत्रों से बालासाहब के प्रति अनादर ही स्पष्ट होता रहा। "जनसंघ" के पदाधिकारियों ने भी अपने पत्र और पत्रकों में श्री बालासाहब के विषय में अशिष्ट भाषा का प्रयोग किया था। उसकी ओर बालासाहब ने पूर्ण दुर्लक्ष किया।

पू. श्री बालासाहब के मन में श्री गुरुजी के विषय में नितान्त आदर और आस्था थी। खुले रूप में प्रदर्शन करने का उनका स्वाभाव न होने से उस विषय में अनेक लोगों को जानकरारी नहीं हैं, किन्तु कुछ घटनाओं से वह स्पष्ट होती है। 1 मई 1960 को महाराष्ट्र राज्य की स्थापना हुई पश्चिम महाराष्ट्र में विशेष आनंद और विदर्भ में नाराजी थी। उस दिन "काला दिवस" के रूप में भी कार्यक्रम हुए। सायंकाल को नागपुर में स्वतंत्र विदर्भ की मांग को लेकर मोर्चा निकला। वह इतवारी में रोका जाने पर पत्थरबाजी हुई श्री गुरुजी उमरेड में श्री भैयाजी दाणी के घर गये थे। गड़बड़ी होने की कल्पना नहीं थी। संचारबंदी जाहिर होने पर श्री कृष्णराव मोहरीर उमरेड में होने से उस समय के विधान सभा सदस्य श्री बच्छराज जी को श्री गुरुजी के उमरेड में होने की दूरभाष द्वारा सूचना दी गई और सायंकाल को लौटते समय संचारबंदी में आवश्यक अनुमतिपत्र (Pass) प्राप्त करने को कहा गया। उसके अनुसार पुलिस आयुक्त से आवश्यक

अनुमति पत्र लेकर वे स्वयं सायंकाल 6 बजे से नागपुर उमरेड मार्ग पर खड़े रहे। श्री बालासाहब कुछ समय पूर्व ही कार्यालय लौटे थे। श्री गुरुजी के उमरेड जाने की खबर उन्हें मिली। वे अस्वस्थ और नाराज भी हुए। आज गुरुजी किसलिये उमरेड गये? कर्फ्यू लगा है। उनके कार्यालय में लौटने के लिये आवश्यक अनुमति पत्र लिया है या नहीं? ऐसे कई प्रश्न मुझे पूछे। श्री बच्छराज जी ने व्यवस्था की है ऐसा बताने पर उनका गुस्सा थोड़ा कम हुआ किन्तु श्री गुरुजी कार्यालय में वापिस आते तक डा. हेडगेवार भवन की दूसरे मंजिल पर वे अस्वस्थता से चक्कर लगाते रहे।

ऐसा खुले बदन ही चलना है क्या?

दूसरा प्रसंग भी मजेदार है। 1967–68 यह वर्ष होगा। तृतीय वर्ष के वर्ग का बौद्धिक विभाग मैं संभालता था। शिक्षार्थी और अधिकारियों की निवास व्यवस्था, बैठकें, बौद्धिक वर्ग, रेशिमबाग क्षेत्र के विद्यालय और महाविद्यालयों में होती थी। श्री बालासाहब स्मृतिभवन में ही रहते थे। किन्तु भोजन, बौद्धिक वर्ग, बैठकों के लिए मोहता महाविद्यालय में जाना–आना करते थे। रात को बैठक के लिये श्रीगुरुजी को मोहता विज्ञान महाविद्यालय में पहुचाने का काम मैं ही करता था। किन्तु एक दिन मुझे कार्यवश महल जाना था इसलिये वर्ग के सर्वाधिकारी श्री अण्णाजी पांढरीपांडे की मोटर में श्री गुरुजी को विज्ञान महाविद्यालय में ले जाने का अनुरोध मैंने किया। श्री गुरुजी को भी इस व्यवस्था की जानकारी देकर मैं बाहर गया। उस समय बालासाहब का निवास स्मृतिभवन में था। बालासाहब को ठण्ड भी खूब लगती है और गरमी की भी उन्हें तकलीफ होती है। उस दिन रात के भोजन के बाद खुले बदन से स्मृतिभपन के सामने के छोटे से आंगन में वे विश्राम कर रहे थे। श्री गुरुजी का संध्या वंदन 8:30 को समाप्त होने पर एक बनियान पहन कर तौलिया लेकर नीचे उतरे और अकेले ही मोहता विज्ञान विद्यालय की दिशा में चलने लगे। श्री बालासाहब ने यह देखा। किन्तु वे कुछ भी कर नहीं सकते थे। श्री गुरुजी स्मृतिभवन के बाहर 20–25 कदम ही गये होंगे। उतने में ही मैं वहां पहुँचा। मैं सायकल से उत्तर ही रहा था कि मुझे देखकर बालासाहब ने श्री गुरुजी के बैठक की व्यवस्था के विषय में मुझसे जानकारी ली। कार्यक्रम में आधे घण्टे की देरी है यह भी मैंने बताया। उस पर उन्होंने कहा "अरे! गुरुजी तो अकेले ही नजदीक के मार्ग से विद्यालय की ओर बढ़े भी हैं। अब ऐसे खुले बदन से ही उनके साथ कैसा जाऊं? जा दौड़कर।" मुझे हंसी आई और मैं सायकल पर चढ़कर 3 मिनिटों में ही गुरुजी के पास पहुंचा। बैठक के लिये स्वयंसेवक स्मृतिभवन की ओर आ रहे थे। श्रीगुरुजी को उनको लेने श्री अण्णाजी पांढरीपांडे आनेवाले थे इस बात की याद दिलाने पर उन्होंने कहा संध्या जल्दी समाप्त हुई इसलिये निकल पड़ा। मैंने श्री बालासाहब के मुझपर नाराज होने की बात कहते हुए उनका वाक्य भी उद्घृत किया। उस पर गुरुजी खुले दिल से हंस पड़े।

श्री गुरुजी की बिमारी के अंतिम 15 दिनों में श्री बालासाहब अपने खेती के गांव पर गये थे। भोजन की अव्यवस्स्था के कारण चक्कर खाकर वे गिर पड़े। नागपुर को तुरन्त सूचना दी गई। डा. देशपांडे उन्हें

नागपुर लाने के लिये गाड़ी लेकर निकले। श्री गुरुजी ने पूछने पर बालासाहब को लाने गाड़ी भेजी गई यही बताया गया। वे गिर गये थे यह किसी ने बताया नहीं। श्री बालासाहब नागपुर आने पर कार्यालय में होते हुए भी श्री गुरुजी से मिले नहीं। तुरन्त मिलने पर उनके स्वास्थ्य के विषय में श्री गुरुजी ने पूछताछ की होती और उनके अस्वस्थता की जानकारी मिलने पर श्री गुरुजी चिन्तित होते ऐसा बालासाहब के मन में भय था। दो दिन बाद मिलने पर वर्ग के प्रवास के विषय में बातचीत निकली। उनके स्वास्थ्य का विषय निकला ही नही।

श्री गुरुजी के देहावसान के दिन (5 जून 1973) श्री बालासाहब हैदराबाद में थे। वे दूसरे दिन प्रातः नागपुर लौटे। श्री गुरुजी का अन्त्यदर्शन लेते समय वे बहुत अस्वस्थ हुए थे। श्री गुरुजी ने उनकी सरसंघचालक पद पर नियुक्ति की है ऐसा स्व. श्री अप्पाजी जोशी के कहने पर कुछ देर वे बधिर होकर बैठे रहे। "मेरे स्वास्थ्य की जानकारी गुरुजी को थी ना?" यह सूचक प्रश्न भी उन्होंने आबाजी थत्ते से पूछा। सरसंघचालक की इच्छा के अनुसार दायित्व स्वीकारने को वे सिद्ध हुए। सरसंघचालक पद पर उनकी नियुक्ति का पत्र स्व. श्री बालासाहब भिडे ने पढ़ा। अन्य दो प. पर श्री बालासाहब ने पढ़े। बिदाई लेने के पत्र में से "शेवटची विनवणी"..... यह भाग पढ़ते समय उनका हृदय भर आया। कंठ, रूद्ध हुआ। जैसा–तैसा उन्होंने वाचन पूर्ण किया। उनकी इतनी विकल अवस्था देखने पर उनके मन में श्री गुरुजी के विषय में कितनी अगाढ़ श्रद्धा और आत्मीयता थी इसका दर्शन सभी को हुआ।

देवदुर्लभ व्यक्तित्व

सरसंघचालक की भूमिका में बालासाहब ने रेशीमबाग मैदान पर हुए पहले सार्वजनिक भाषण में कहा था, "पू. डाक्टरजी और श्री गुरुजी जैसी मेरी गुणवत्ता न होते हुए भी संघ के पास देवदुर्लभ कार्यकर्ताओं का समुदाय होने के कारण मैं अपने कार्य में सफल बनूँगा।" इस 24 वर्षों के कालखण्ड में दोनों ज्येष्ठ महापुरुष सरसंघचालक श्री बालासाहब संक्रमित होने की सुखद अनुभूति सभी को हुई। आज परिस्थिति बहुत कठिन है। गंभीर तथा भयानक सर्वग्रासी समस्याएं खड़ी है, धर्म की ग्लानी, अधर्म का अभ्युत्थान, सज्जन शक्ति का विनाश, सर्वंकष अधःपतन, उदासीन आत्मविस्तृत और शक्तिहीन बना आत्मविस्मृत समाज पुरुष, स्वार्थपुर्ति के लिये भ्रष्टाचार और अनीति के कीचड़ में आकण्ठ डूबा हुआ नेतृत्व इन कारणों से अराजक की परिस्थिति निर्माण हुई किन्तु इस भीषण अवस्था में भी संघकार्य का सामर्थ्य और प्रभाव बढ़ने के कारण संघकार्य समाज के आधारशक्ति के रूप में खड़ा है। 1940 में पू. डाक्टरजी को हिन्दुराष्ट्र के लघुरूप का दर्शन हुआ था। उस लघुरूप का विराट विश्वरूप में परिवर्तित होने की प्रक्रिया गति ले रही है। परिस्थिति की भीषणता की तुलना में संघ शक्ति कम दिखती हो तो भी उसी के आधार पर दुर्जन शक्ति का नाश और धर्म की स्थापना होनेवाली है यी निश्चित। श्री बालासाहब के सरसंघचालकत्व के काल में ऐसी आधारशक्ति का परिचय सब जनता को मिलने के कारण सभी स्तरों के लोग लाखों की संख्या

में उनके विचार सुनने के लिये एकत्रित आते हैं। उत्कृष्ट संघटक, सही मार्गदर्शक, संघ के विचारों का व्युत्पन्न प्रवक्ता, प्रगल्भ दूरदृष्टि सम्पन्न, सभी को सदैव कार्यप्रवणता की प्रेरणा देनेवाला नेता इस नाते से दुनिया के लोग उनको पहचानने लगे हैं। जीवन की ऐसी परिपूर्ति के मोड़ पर खड़ा रहते समय ही बालासाहब ने स्थितिप्रज्ञ वृत्ति से निवृत्ति का निर्णय लिया। उसके आत्मसंतुष्टि का अनुभव वे ले रहे हैं। इससे निष्काम कर्म योग का कितना उत्तुंग आदर्श खड़ा हुआ है।

मेरी अल्प बुद्धि के अनुसार प्रतीत हुआ और मार्यादित कक्षा में प्राप्त किया हुआ पू. श्री बालासाहब का यह व्यक्तिदर्शन है।

✸✸✸